द्वितीयअध्याय

'गिरिराज किशोर के नाटकों का सामान्य परिचय'

द्वितीयअध्याय

'गिरिराज किशोर के नाटकों का सामान्य परिचय'

गिरिराज किशोर हिंदी साहित्य में एक महान कथाकार के साथ श्रेष्ठ नाटककार भी है। अपने नाटकों में सामाजिक, राजनीतिक तथा मनोवैज्ञानिक यथार्थ को प्रस्तुत किया है। समाज में स्थित रुढी, प्रथा, परंपरा भ्रष्टाचार, अवैध संबंध, अत्याचार, अन्याय, राजनीतिक स्थिति, सत्तालालसा की प्रवृत्ति आदि को अपने नाटकों के जरिए समाज के सामने रखकर सुधारात्मक उद्‌देश्य से प्रस्तुत किया है। इनके नाटकों के बारे में गिरिश रस्तोगी का कथन है - ''प्रतिकात्मकता सांकेतिकता, सामाजिक, राजनीतिक, विद्रुपताएँ, तीखापन और दृष्टि का पैनापन उनके नाटककार के रूप में भी है। वैसे नाटकों में सामाजिक, अंतविरोधों, विद्रुपताओं की अपेक्षा उन्होंने राजनैतिक विरोधाभास को अधिक आँका है। वर्तमान व्यवस्था और व्यवस्था के बीच आदमी के स्थिति को उनका हर नाटक चित्रित करता है।''[1]

गिरिराज किशोर अपने नाटकों में वर्तमान परिस्थितियों में मानवीय मूल्यों के समाप्त होते जाने की स्थिति से अत्यंत क्षुब्ध होकर उन कारणों को खोजने का प्रयास करते है। जिनसे मानवीयता निरंतर क्षीण हो रही है। समकालीन नाटककारों में गिरिराज किशोर का नाम महत्त्वपूर्ण है। उनके नाटकों की कथावस्तु वर्तमान स्थिति को सामने रखती है। किसी भी नाटक को सफल बनने के लिए उसकी कथावस्तु अच्छी होनी चाहिए। गिरिराज के सभी नाटकों की कथावस्तु सफल नाटकों की कथावस्तु की कोटी में आती है। गिरिराज किशोर अपनी अन्य कृतियों की भाँति नाटकों में भी विविधता और प्रयोग की दृष्टि से अपनी पहचान बनाए रखने में सफल हुए है। इनके नाटकों को पसन्द ही नहीं किया जाता बल्कि इनमें से अधिकतर का सफल मंचन भी हुआ है।

गिरिराज किशोर एक ऐसे साहित्यकार है, जिनकी रचनाएँ सिर्फ

---

1. गिरिश रस्तोगी - 'समकालीन नाटककार',पृ.78-79

मनोरंजन के लिए नहीं बल्कि समाज को शिक्षा देने के लिए लिखी है। सामाजिक समस्या को आधार बनाकर बदलते मूल्यों, उनमें होनेवाले परिवर्तनों को भी चित्रित किया है। उनके नाटक मंचीयता की दृष्टी से उपादेय रहे हैं। उनमें आधुनिकता, युगबोध के दर्शन होते हैं। अतः उनकी कथावस्तु समस्या प्रधान लगती है। वे सच्चे एवं सफल साहित्यकार लगते हैं। उनके नाटकों पर स्वतंत्र रूप से विचार होना जरूरी है। किशोर जी ने समाज जीवन की वास्तविकता को अपनाकर कलम चलाई है। 'कलम के सिपाही' किशोर जी की नाटक रचना तथा कथावस्तु पर यहाँ विचार करेंगे -

2.1 कथावस्तु का अर्थ एवं परिभाषा -

कथावस्तु यह शब्द कथा और वस्तु से बना है। साहित्य निर्मिति में महत्त्वपूर्ण तत्व कथावस्तु है। कथावस्तु का सफल प्रयोग होने से साहित्य निर्मिति की आधी सफलता मानी जाती है। यह कहा जाता है, रचना का महल कथावस्तु की नींव पर खड़ा रहता है। कथावस्तु को घटना, कथानक, प्लॉट आदि नामों से संबोधित किया जाता है। कथावस्तु रचना के आदि से अंत तक चलती है। साहित्यकार अपनी मान्यताएँ, विचार इसके सहारे स्पष्ट करता है। इसी कारण यह महत्त्वपूर्ण तत्व लगता है। कथावस्तु के स्वरूप पर विचार करते हुए इसे परिभाषित किया है जो इस प्रकार -

कथावस्तु नाटक का शरीर है। कथानक में आधिकारिक और प्रासंगिक कथाएँ आती है। कथा में व्यक्ति, स्थान, घटना, परिणाम आदि बातें रहती है। इसी कारण पात्र कम या ज्यादा हो सकते है "इतिवृत्त या कथा उस घटनाक्रम को कहते है जिसमें किसी नायक के जीवन का पूर्व चरित्र आ जाय किन्तु अंकों और दृश्यों के अनुसार घटनाओं की ऐसी सजावट को सुविधाजनक या कथावस्तु कहते हैं, जिसमें नाटकीय प्रदर्शन की दृष्टि से घटनाओं का वह क्रमिक ढांचा आ जाये।"[2]

2. डॉ.लक्ष्मीनारायण भारद्वाज - नाटयलोचन, पृ.9

कथावस्तु में एकता, पूर्णता, संभावना, स्थायिकता, कौतुहल, साधारणीकरण आदि विशेषताएँ होती है। कथानक का विस्तार इतना होना चाहिए की जिसमें मानव का जीवन स्पष्ट हो सके। सुख-दुःख का चित्रण हो सके। इतिहास, कल्पना का आधार लेकर भी विकास किया जाता है। कथानक इतना लघु भी न हो जिसके रसास्वादन न हो सके। प्रत्येक छोटी-छोटी घटना भी कथानक का अंग होती है। समाजसुधार मानसिक वृतियों का निरूपण, समस्या निवारण, आनंदानुभूति, शिक्षा प्रसार आदि कई उद्देश्यों को सामने रखकर कथानक बनाया जाता है।

डॉ.बच्चनसिंह के शब्दों में - ''कालक्रमानुरूप व्यवस्थित घटनाओं का कथन कथा है।''[3] आज कथा के स्तरपर कथावस्तु, कथानक जैसे शब्दों का प्रयोग होता है। कथावस्तु में प्रारंभ, विकास, चरमसीमा, उत्तार और अंत आदि भाग माने हैं। कथावस्तु में पाँच अवस्थाओं और पांच संधियो को स्वीकार किया है। यहाँ स्पष्ट है कथानक में उत्तार चढाव होने के साथ-साथ सजीवता, स्पष्टता तथा सरलता का होना जरूरी है।

1) 'मानक हिंदी कोश' में ''कथावस्तु'' याने ''उपन्यास, कहानी, नाटक आदि की वे सभी मुख्य बातें जिनसे उनका स्वरूप प्रस्तुत होता है वह 'कथावस्तु' कहलाती है।''[4]

2) ''हिंदी शब्दसागर'' के अनुसार - ''नाटक या आख्यान आदि का कथन या कहानी वस्तु ही कथावस्तु होती है।''[5]

3) ''नालंदा विशाल शब्दसागर'' में इसका अर्थ है - ''उपन्यास अथवा कहानी के ढाँचा को कथावस्तु माना है।''[6]

4) आधुनिक हिंदी शब्द-कोश में - कथा का वह मूल प्रसंग या ढाँचा जिससे नाटक, कहानी, उपन्यास आदि की रचना होती है।''[7]

3.डॉ.शांति मलिक - 'हिंदी नाटकों की शिल्पविधि का विकास',पृ.513
4. सं.रामचंद्र वर्मा - ''मानक हिंदी कोश'', पृ.443
5. सं.शामसुंदर दास - ''हिंदी शब्द सागर'', पृ.767
6. सं.श्री नवलजी - ''नालन्दा विशाल शब्दसागर'', पृ.194-195
7. सं.गोविंद चातक - ''आधुनिक हिंदी शब्द कोश'',पृ.134

कथावस्तु को विभिन्न कोशकारोंद्वारा अपने-अपने दृष्टिकोन से परिभाषित किया है। यह नाटक का महत्त्वपूर्ण तत्व है। मानव के शरीर में जो स्थान अस्थियों का होता है वही स्थान नाटक में कथावस्तु का है ''नाटक की मुल कथा एवं मुल कथा से संबंध रखनेवाली समस्त घटनाओं को कथावस्तु कहते है।''[8]

डॉ.सुरेश सिंह के अनुसार - ''वास्तव में कथानक का स्वरूप एक नदी की भाँति होता है, जिसमें पात्र घटनाएँ आदि इस प्रकार सहज पर कलात्मक ढ़ंग से प्रवाहित होते हैं कि बिना किसी अवरोध या गतिरूद्धता के पाठक सहज ढ़ंग से अंत में जाकर रूक पाता है और तब उसे ऐसा प्रतित होता है कि किसी सत्य या यथार्थ की तीखी प्रतिक्रिया अत्यंत प्रभावोत्पादक ढ़ंग से जैसे उसे उद्वेलित कर रही है और वह अपने को उसके प्रभाव आवेश-सा पता है।''[9]

नाटक के अंत के संदर्भ में भारतीय नाट्यशास्त्रियों की मान्यता है कि नाटक सुखांत हो तो - पाश्च्यात्यों ने दुःखान्त को प्राथमिकता दी है। डॉ.रस्तोगी के मतानुसार ''आज के हिंदी नाटक ऐसी किसी सीमा-रेखा में आबध्द नहीं है; क्योंकि समय, परिस्थितियों एवं जीवन की मांग के कारण वे अपने दृष्टिकोन को इतना सीमित नहीं रख सकते हिंदी नाटक सुखांत भी हो सकते और दुखान्त भी।''[10]

कथावस्तु या कथानक नाटक का प्राणतत्व होता है। इसके अभाव में नाटक की रचना असंभव है। अरस्तु ने तो कथावस्तु को नाटक का आत्मा माना है। कथावस्तु का संबंध केवल कथा से न होकर नाटक की संपूर्ण घटनाओं और उसके संपूर्ण समुह से होता है। नाटकों में कथावस्तु विविध रूपों में प्रस्तुत होती है। साहित्यकार अपनी अन्तर्दृष्टी, प्रभावात्मकता एवं व्यापक संवेदनशीलता की कसौटी पर कसकर ही विषय को चुनता है। कथानक का चयन एवं उसका व्यवस्थित कलापूर्ण प्रस्तुतिकरण ही नाटकाकर की महानता का मानदण्ड है।

---

8. डॉ.शान्ति मलिक - 'हिंदी नाटकों की शिल्पविधि का विकास', पृ.35

9. डॉ.सुरेश सिंह - 'हिंदी कहानी उद्‌भव और विकास',पृ.37-38

10. डॉ.गिरिश रस्तोगी - 'हिंदी नाटक सिद्‌धान्त और विवेचन', पृ.55

2.2 गिरिराज किशोर के विवेच्य नाटक -

	नाटक	प्रकाशन	प्रथम संस्करण
1)	''नरमेध''	- आई - 47, जंगपुरा एक्सटैन्शन,नई दिल्ली	प्र. 1971
2)	''प्रजा ही रहने दो''	- नेशनल पब्लिशिंग हाऊस, 23 दरियागंज, नई दिल्ली	प्र.1977
3)	''घास और घोड़ा''	सरस्वती विहार, 21 दयानंद मार्ग, नई दिल्ली	प्र.1980
4)	''चेहरे-चेहरे किसके चेहरे'	लोकभारती प्रकाशन, म.गांधी मार्ग, इलाहाबाद.	प्र.1983
5)	''केवल मेरा नाम लो''	साहित्य सदन, नयागंज पो.आ.बिल्डींग, कानपुर	प्र.1986
6)	''जुर्म आयद''	नेशनल पब्लिशिंग हाऊस, 23, दरियागंज, नई दिल्ली	प्र.1987

2.3 गिरिराज किशोर के विवेच्य नाटकों का सामान्य परिचय -

2.3.1 नरमेध -

'नरमेध' गिरिराज किशोर का मनोवैज्ञानिक नाटक है। मनोविज्ञान के बारे में डॉ.शिवराम माली का मत है - ''भावों और मनोवेगों का अध्ययन मनोविज्ञान का केन्द्र बिन्दु है। साहित्य के भिन्न-भिन्न विषयों में मनोविज्ञान का प्रयोग हुआ है। साहित्य मनोभावों की उपज है। मानवीय स्वभाव की पुरी जानकारी साहित्यिकों के लिए वांच्छित है।''[11] मनोविज्ञान का अर्थ मन का विज्ञान। मन मानवी जीवनानुभूति, एवं अदृश्य संकल्पना है। जिस पर आजतक सोचा गया है। मनोवैज्ञानिकों ने जितना अनुसंधान किया है साथ ही साहित्यकारों ने भी अपनी कलम चलाई है। साहित्य में पात्रों के चरित्रचित्रण के सहाय्यता से इसे स्पष्ट किया है। मनोवैज्ञानिक नियमावली को साहित्य के परिप्रेक्ष्य में रखकर उसका मनोविश्लेषणात्मक स्वरूप निश्चित किया जाता है।

---

11. डॉ.शिवराम माली - 'स्वच्छन्दतावादी नाटक और मनोविज्ञान',पृ.33

गिरिराज किशोर के 'नरमेध' नाटक का प्रकाशन सन्1971 में हुआ। इसकी कथावस्तु के बारे में दुबे जी का मत हैं कि - "'नरमेध' की कथावस्तु सेक्स-कुंठाग्रस्त वैवाहिक नारी की मनोवेदना पर आधारित है।"[12] नाटक में सभी पात्रों की आरंभ से अंततक मानसिक कुंठा चित्रित है। साथ ही पारिवारिक घुटन और टुटन का भी चित्रण हुआ है। इस नाटक में महत्त्वपूर्ण नारी पात्र तारा है जिसकी मानसिकता ठीक नहीं है और बिगड़ी मानसिकता ही इस नाटक की महत्त्वपूर्ण समस्या है। डॉ.सरयु प्रसाद चौबे के अनुसार - "व्यक्ति जिन संवेगों की अनुभूति करता है उनमें प्रेम बहुत ही जटिल संवेग है प्रेम के संवेग का स्वरूप व्यक्ति के विकास की अवस्था के अनुसार जन्म से मृत्यु तक बदलता रहता है। इस लंबी मात्रा में प्रेम का पथ कई मोड लेता है। व्यक्ति का कोई भी कार्यक्षेत्र क्यों न हो प्रेम के कारण उसका कार्यक्षेत्र बहुत विकसित हो जाता है। प्रेम का संवेग व्यक्ति के जीवन में बहुत-सी असामान्यताएँ भी ले आता है। प्रेम से संबंधित दूसरा परंतु विरोधी संवेग घृणा है। ये दोनों साथ-साथ चलते हैं।"[13] इस नाटक की तारा इसी स्थिति से गुजर रही है।

तारा वंती की शादी अपने बेटे वंदु से होने का विरोध करती है। क्योंकि तारा को वंती के हर बर्ताव में पूर्वप्रेमी नरेन का आभास होता है। वंती एक भ्रष्ट प्रेमिका है। तारा की सहेली नीरा भी एक असफल प्रेमिका है। इंद्रराव अपनी पत्नी को दुःख नहीं देना चाहते इसलिए खुद दुःख सहते रहते हैं। रंजन को माँ की बाते बुरी लगती है। अंकन पर घर के घुटनभरे माहौल का बुरा असर पड़ता है। इस नाटक में स्त्री पुरूष के लगाव-अलगाव को अलग शैली में प्रस्तुत किया गया है। पात्रों के मन में छिपी भावनाओं को और वेदना को स्पष्ट रूप से चित्रित करने का प्रयास गिरिराज किशोर ने अपने इस नाटक में किया है।

"साहित्यिक को चरित्रों उनकी क्रियाओं-प्रतिक्रियाओं को समझने के लिए उनके मन का विश्लेषण करते हुए यह देखना होगा कि कौन पात्र कहाँ,

---

12. दुबे वि.ध.- "साठोत्तरी हिंदी नाटक", पृ.12
13. डॉ.सरयु प्रसाद चौबे - "असामान्य मनोविज्ञान और आधुनिक जीवन", पृ.359

किस कारण नियोजित अथवा विचलित होकर क्या और किस ढंग से कार्य करता है। यही साहित्यिक मनोविज्ञान है।''[14]

यहाँ लगता है हर-एक पात्र परिस्थिति में अटके हैं। वे सभी अलगाव, असफलता, वियोग और कुंठा में जी रहे है। इससे उनकी मानसिकता टूट चुकी है। मनोविज्ञान, मनस्थिति का अंकन करते समय नाटककारने विशेषतः नारी पात्रों की भावुकता पर भी सोचा है। तारा की स्थिति इसी कथावस्तु का मूल केंद्र रहा है। नारी मनोविज्ञान से संबंधित यह नाटक है।

कथावस्तु का आरंभ -

'नरमेध' इस नाटक की शुरूवात बरामदे से होती हैं। जिसमें प्रेस, दरवाजे पर्दे, ड्राईंगरूम, बैडरूम आदि का चित्रण है। वहाँ एक नेमप्लेट लटकी है जिसपर लिखा है, ''इंद्रराव का घर''। नाटक रंजन और अंकन की बेचैनी से शुरू होता है। वे दोनों माँ बीना बताए कहाँ चली गई है इसलिए परेशान है। माँ अँधेरे में गयी, रज्जब घर का नोकर भी उनके साथ नहीं गया, सब सोते रहे और वह न जाने कहा चली गयी। अंकन को घर की हालत पनीर के पानी की तरह लगती है। इतने में अंकन, रंजन को पुकारती हुई माँ आती है। तारा गंगा के बीचोबीच जानेपर क्या हुआ? वह सब अंकन को बताती है। तारा की तलाश करने गया रंजन इंद्रराव के ऑफिस जाता है। वहाँ उसे एक चिठ्ठी और वंती के शादी का कार्ड मिलता है। वह ले आकर अंकन को दिखाता है वह वंदू की चिठ्ठी होती है जिसमें वंती की शादी में तारा को ले जाने का जिक्र होता है और इस बात का पता तारा को था इसलिए वह बेचैन हो गयी उसे लगा कि बच्चों की खुशी उसीने अपने हाथों से दफना दी। वंती की शादी के कारण रंजन भी उदास होता है।

इंद्रराव ऑफिस से सीधे वंती को शादी की बधाई देने उसके घर जाते हैं। वंती अपने सारे सुख-दुःख की बाते इंद्रराव को बताती है। वंती को तारा की बात बुरी लगती है। जब तारा वंती से कहती हैं''मुझे बहु चाहिए, द्रौपदी नहीं।

14. डॉ.गुरूदयाल बजाज - साहित्य-मनोविज्ञान और हिंदी एकांकी - पृ.78

मन से तो द्रौपदियाँ सभी होती है।''[15] ऐसा वंती को लगता है। तारा का सोचना घर के हर आदमी को चारो ओर से घेरनेवाला है ऐसा रंजन को लगता है। तारा को रंजन की जबान तीखी, जला देनेवाली प्रतीत होती है। अंकन के मन पर इन सब का बुरा असर पडता है। उसे लगता है कि घर में बारूद भरा है जो कभी भी फट सकता है। अंकन इस सबको जिम्मेदार वंती को मानता है।

मध्य -

अंकन घर की हालात से परेशान होता है। वह घर के सब हालात तारा की सहेली नीरा को बताता है। वह कहता है - ''आप तो जानती ही है बडे भैय्या और वंती जीजी का विवाह हमारे घर में चिंगारी की तरह सुलग रहा है। कभी छोटे भैय्या सुलगते हैं कभी माँ। पापा तो पत्थर हो गये हैं। मुझे लगता है अंदर-ही-अंदर ज्वालामुखी पक रहा है। धमाका होने में ज्यादा देर नहीं है।''[16]

अंकन की परेशानी देख नीरा समझ जाती है कि तारा हमेशा अपनी इच्छा से कार्य करती है। अपना अधिकार चलाती है। अंकन उसे बताता है कि सवेरे वे सुरज को पकडने गई थी और गंगा की दलदल में फस गई। दोपहर को गैस अपने फेफडों में भरकर अंदर आग लगती है क्या ये देखना चाहती थी ? तारा ये सब वंती के शादी के कारण बेचैन होकर करती है। वंदू की चिठ्ठी के कारण तारा दुखी हो जाती है। वंती तारा को छोडकर सबको अच्छी लगती है। वंती की खुले मन से की जानेवाली बातें तारा को पसंद नहीं। यहाँ स्पष्ट है तारा अपना रोब जमाना चाहती है।

वंती की शादी के लिए नरेन तारा के पास आता है पर तारा मना कर देती है। क्योंकि तारा को अपने गुजरे जमाने की याद आती है। इंद्र मानते है ''जैसे वंती की शादी हो रही है वैसे विलायत से लौटने पर वंदू की भी हो जाए। प्रेम में असफल होने पर शादीयाँ नहीं रूकती। वैराटी के ख्याल से प्रेम का असफल होना बहुत जरूरी है।''[17]

15. गिरिराज किशोर - 'नरमेध',पृ.12
16.वही,पृ.16
17. गिरिराज किशोर - 'नरमेध', पृ.53

तारा अपने आप को गुन्हेगार मानने लगती है। उस वक्त इंद्राव कहते हैं, ''तुम्ह मुझे यह तो बताओ, वंती से किसका विवाह करतीं? वंदु का या रंजन का ? जिसका भी दिल टुटता, बहुत टुटता उस टुटन से हम में से कोई भी अच्छुता न रह पाता। धीरे-धीरे सँभल जाएगी। असफल प्रेम पालतु कुत्ते की तरह कुछ दूर पीछा करता है, फिर लौट जाता है। ''[18] पर तारा जानती है प्यार कभीभी दिल से जाता नहीं याद आती रहती है और बहुत तकलीफ होती है। इसलिए वह फिर वंदू और वंती की शादी करने तैयार होती है। लेकिन इंद्र को लगता है वंती अपनी राह पर चल रही है उसे जाने देना चाहिए।

नीरा तारा को साइकेट्रिक को दिखाने को कहती है। तारा इंद्रराव को नरेन समझती है और समझ में आनेपर नरेन को गालियाँ देती है। तारा में अहंम होने के कारण अन्यों की बात मानती नहीं। अहंम के बारे में चौबे जी के विचार है ''स्नायविक व्यक्ती अहंम-केंद्रीत और अतिसंवेदनशील होता है। वह अपने भावना और विचारों को ही महत्त्व देता है। दूसरों के भावना और विचारों को महत्त्व नहीं देता। जीवन की बहुतसी परिस्थितियों में ऐसे व्यक्ती के साथ निवार्ह करना बहुत कठीण होता है। उसके आत्मप्रतिष्ठा को साधारणशी बात से ठेस पहुँचती है।''[19] इंद्रराव के शब्दों में ''अगर ये कुछ करेगी तो जिदंगी के से निराश होने के कारण नहीं बहुत ज्यादा जुड़े होने के कारण।''[20]

इंद्रराव को बहुत अकेलापन महसूस होता है फिर भी वे तारा को संभालने की बहुत कोशिश करते हैं। तारा रात भर सोचती है। वह अपनी चिंगारियाँ वंती को देना चाहती थी पर वही चिंगारियाँ दुगुणी-तिगुणी हो गयी ऐसा उसे लगता है।

तारा - ''वंती की शक्ल नरेन जैसी है। उसी तरह हँसती है, मजाक करती है। उसके चेहरे पर नरेन की आँखे नजर आती है वह बाप की नकल करती है। मुझे लगता है

---

18. गिरिराज किशोर - 'नरमेध', पृ.21

19.डॉ.सरयु प्रसाद चौबे - 'असामान्य मनोविज्ञान और आधुनिक जीवन',पृ.378

20. गिरिराज किशोर - 'नरमेध',पृ.22

रंजन और वंदु इसीलिए उलझ गए। क्या मेरी पीढ़ियाँ नरेन की पीढ़ियों को पीढ़ी-दर पीढ़ी इसी तरह प्यार कर-करके टुटती रहेंगी ? इसके लिए मैं ही दोषी हूँ - मैं ही।"[21]

अंत -

अंत में तारा की मानसिकता पुरी बिगड जाती है। वह सपनों को सच मानने लगती है। उसके सपनों में रंजन, वंती, वंदू आ जाते है। तारा वंती की तस्वीर अपने घर में न हो ऐसा चाहती है और तस्वीर उठाकर जमीन पर फेकने से काँच के टुकडे बिखर जाते हैं। उसके मन में आता है कि वंती मेरे घर में आती, तो नरेन बनकर रहती वह तस्वीरों से बातें करने लगती है। तस्वीरें उसे सच्चे व्यक्ति की तरह लगती है। वह आश्चर्य से वंदु तुम रंजन तुम कहती रहती है। वंती की आवाज उसे नरेन की आवाज के समान लगती है। वंती की तस्वीर देखकर वह उसे पुछती है तुम हँसती क्यों हो? अपने आपसे बाते करते हुए वह उन तस्वीरों को जलाने के लिए बुझी मशाल लेकर जाती है। मशाल को छूकर देखती है और फुँफकर धीरे-धीरे सिसकने लगती है। इस तरह तारा की बिगडी मानसिकता के साथ नाटक समाप्त होता है। वह अपने कारण घर के सभी को बहुत तकलीफ देती है।

साहित्य के माध्यम से मानव हृदय की रागात्मक अनुभाव संकल्पना की अभिव्यक्ति होती है। मानवी मन की सुख-दुःखात्मकता का चित्रण किया जाता है। कुंठित वासना, अहंम, लिबिडो, अपमान, अपयश मनोविकृति-मनोभाव का प्रमुख नाटयकृतियों में चित्रण किया है।

डॉ.शिवराम माली मानते हैं -"साहित्य मानवी जीवन की अभिव्यक्ति और उनके भावों एवं विचारों का लेखा-जोखा है। मनोविज्ञान भी उस जीवन के अनुभव और प्रवृतियों का अध्यापन प्रस्तुत करता है।"[22]

निष्कर्ष :-

'नरमेध' में कुंठाग्रस्त तारा की मनोवैज्ञानिकता चित्रित करने में

---

21. गिरिराज किशोर - 'नरमेध', पृ.23
22. डॉ.शिवराम माली - 'स्वच्छदतावादी नाटक और मनोविज्ञान',पृ.34

गिरिराज किशोर सफल रहे हैं। इस नाटक में उलझे हुए रिश्तों को कई स्तर से दिखाया है। साथ ही कुंठाग्रस्त विवाहित नारी की मनोवेदना का परिचय दिया है। नाटक के पात्र मानवोचित दुर्बलताओं से युक्त है। तारा की इस बिगडी मानसिकता का अंकन के मन पर इतना आघात होता है कि वह प्यार इस संकल्पना से नफरत करने लगता है। तारा का अंहम मनोप्रवृति रही है। इसमें तारा के मन का संघर्ष पति से, प्रेमी से और बच्चों से रहा हैं। जिसमें घर के सभी लोगों को जलना पडता है। सभी एक-दूसरे के मन को तकलीफ नहीं देना चाहते हैं पर ऐसा नहीं कर पाते हैं।

इस नाटक में तारा, इंद्र, रंजन, अंकन, नीरा, वंती और वंदू सभी के विचारों में अंतर नजर आता है। तारा के कारण घर के सभी लोगों को परेशानी उठानी पडती है। प्रेम और ममता के द्वंद्व में फसी तारा अपने बच्चों की खुशी का गला घोंट देती है। तारा, नीरा और वंती असफल प्रेमिकाएँ है। वे प्यार तो करती है पर अपने प्यार को वे पाती नहीं। इनके मन में चलते आंतरिक घुटन का चित्रण हुआ है। इस नाटक में सभी पात्रों की मानसिकता अत्याधिक सजीवता से अंकित की गई है। मनुष्य के मनोवेगों और मानसिक कार्य व्यापार का सुक्ष्म अंकन किया है। तारा के माध्यम से विवाहित नारी की मनोवेदना को दिखाया है।

प्रस्तुत नाटक के हर एक पात्र अपनी अपनी स्थिति में अटके हुए है। समस्या सुलझाते हुए टूटते हैं, अपनी असफलता के कारण दुःखी है। तारा की मनस्थिति इसी बात का प्रमाण है। मनोवैज्ञानिकता का गहरा प्रभाव इस नाटक पर दिखाई देता है।

2.5.1 प्रजा ही रहने दो -

स्वातंत्र्योतर नाटककार का इतिहास पुराण के प्रति एक विशेष दृष्टिकोन रहा है। जो नाट्य रचना के माध्यम से व्यक्त हुआ है। उन्होंने प्राचीन संदर्भो से उस रूप में ग्रहण नहीं किया जिन अर्थों में प्रसादकालीन नाटककारों ने किया है। उन्होंने आधुनिक युगीन संदर्भों के साथ उसे जोड दिया है। केवल अतीत का गौरव-गान की प्रवृति न रखकर उसे आधुनिक समस्या के साथ जोड दिया है।

ऐतिहासिक मिथकों का आधार लेकर तत्कालीन मिथकियता की सार्थकता स्पष्ट करने का प्रयास किया है।

'प्रजा ही रहने दो' महाभारतकालीन पृष्ठभूमि पर आधारित नाटक का प्रकाशन सन् 1977 में हुआ है। इस कथा के बारे में तुकाराम पाटील जी का मत है "महाभारत के युद्ध की कथावस्तु भले ही प्राचीन हो किंतु आत्मा नवीन है।"[23] यह नाटक महाभारतकालीन पात्र प्रसंगों के परिवेश में आज की राजनीतिक मुल्यहीनता एवं स्वार्थ में अंधेपन के सार्थक संकेत देता है। नाटककार ने आज की शासन-व्यवस्था को महाभारतकालीन शासनव्यवस्था का पर्याय मानते हुए उसके समानान्तर प्रस्तुत किया है। रमेश गौतम जी का विचार है, "महाभारतकालीन पृष्ठभूमि में 'प्रजा ही रहने दो' राजनीतिक मूल्यहीनता का प्रतीक नाटक है।"[24] सत्ता प्राप्त करने की लालसा और प्रजा की कुंठा और दिशाहीनता को उजागर करनेवाली यह नाट्य रचना है। इसमें महाभारत युद्ध के दुष्परिणामों को चित्रित किया है। रमेश गौतम के अनुसार "गिरिराज किशोर ने महाभारत के उस काल को संवेदना के स्तर पर जीया है और उस गहन अनुभव को समसामायिक परिस्थितियों के संदर्भ में सफलतापूर्वक प्रस्तुत किया है।"[25] अंधे धृतराष्ट्र जैसे शासक और दृष्टी रखकर भी सारे जीवन में अंधेपन का व्रत निभानेवाली गांधारी के समान शासक आज भी है।

महाभारत के मिथकीय पात्रों द्वारा उन्होंने वर्तमान जीवन संदर्भ में उपयुक्त विचार व्यक्त किए है। राज सत्ता के अत्याचार, सत्ता, शोषण की त्रासदी, पारिवारिक मूल्य विघटन, भ्रष्ट व्यवस्था, न्याय की विद्रुपता, जन चेतना का नंपुसक आक्रोश और मूल्यहीन आचरण धार्मिकता आदि विषयों पर गिरिराज किशोर ने सक्षमता से व्यंग्य किया है। इस नाटक में महाभारत के युद्ध के कारणों की ओर संकेत करने का प्रयास किया है।

---

23. डॉ.तुकाराम पाटिल - 'नाटयालेख', पृ.25
24. रमेश गौतम - समकालीन अतीतोन्मुखी नाटक, पृ.132
25. रमेश गौतम - 'मिथक और स्वातंत्र्योतर हिंदी नाटक, पृ.165

15194

आरंभ -

यह संपूर्ण नाटक छः दृश्यों में विभाजित है। प्रथम दृश्य का आरंभ उद्घोषक की इस उघोषणा से होता है - "अगली अमावस्या को हस्तिनापुर के राजमहल में जुए का आयोजन किया जाएगा। जिसमें कौरवों की ओर से गांधारी के भाई राजा शकुनी तथा पांडवों की ओर से धर्मराज युधिष्ठिर जुए में भाग लेंगे। सभी नागरिकों का इस आयोजन में शामिल होना आवश्यक है।"[26]

तत्पश्चात नागरिकों की राजा, प्रजा और धर्म नीति आदि पर चर्चा होती है। नागरिकों का पांडवों के प्रति प्रेम प्रकट होता है। दुसरे दृश्य का आरंभ प्रहरीयों की बात से होता है। उन्हें आनेवाले कल की प्रतिक्षा है। आनेवाले कल का परिणामही उनकी जिज्ञासा वृत्ति है। धृतराष्ट्र आशंकीत होकर इस खेल को रोख देना चाहते हैं। गांधारी भूतकाल में घटित घटनाओं के प्रतिशोध वंश खेल हो जाने के निर्णय में सुयोधन का पक्ष लेती है। कुंती विदूर के वार्तालाप से पता चलता है कि विदूर युधिष्ठिर के वास्तविक पिता है। विदुर छिपकर युधिष्ठिर को द्युतक्रीडा में भाग लेने से रोकने आए है। ज़ब कि कुंती धृतराष्ट्र द्वारा प्रथम बार समानता के स्तर पर युधिष्ठिर को आमंत्रित किए जाने से प्रसन्न होती है। सुयोधन-धृतराष्ट्र और गांधारी से अपने हितों की ओर से आँख न बंद करके स्वत्व प्राप्ती की बात करता है। धृतराष्ट्र को अपने अंधेपन की पीड़ा सताती है। प्रहरी शासकों की आंधी व बहरी मनोवृत्ति पर व्यंग्य करते है। जिन्हें जनता के दुःख कभी सुनायें नहीं पडते। यह अंधापन शारीरिक हो या पारिवारिक या भावनिक राज्य के हित में नहीं है। आज की राजनीति ऐसे अंधे लोगों से बनी है, बुनी है। चाहे धृतराष्ट्र हो या गांधारी इसी प्राचीन कथा का आधार लेकर आज के भ्रष्ट बिगडी राजनीति पर व्यंग्य किया है। विदूर द्युतक्रीडा की भावी संभावनाओं को लेकर चिंतित है। सुयोधन मुक्ति चाहता है। तो गांधारी उसे मुक्त करने की पक्षधर है। जबकि धृतराष्ट्र कहते हैं, "विद्रोह मुक्ति दिला सकती है, स्वतंत्र भी कर सकता है पर उतराधिकार नहीं दिला सकता। उतराधिकारी होने के लिए संपूर्ण बोझ वहन करना पडता है।"[27]

---

26. गिरिराज किशोर - 'प्रजा ही रहने दो',पृ.75
27. वही,पृ.18

प्रहरीयों को अपने वेतनभोगी होने की पीड़ा सताती है। उन्हें ये अपमान लगता है कि प्रजा की भावनाओं, गतिविधियों और क्रिया-कलापों का कोई महत्व नहीं है। वह रातभर किसी के लिए जागे अथवा खड़े रहे तो भी उसका कुछ मुल्य नहीं होता। उसकी व्यथा यह है कि किसी को प्रणाम करे तो उसका उत्तर भी नहीं मिलता। विदूर जुए के प्रस्ताव को अस्वीकार करने के लिए कहते हैं, परंतु युधिष्ठिर अस्वीकार नहीं करते हैं। द्रौपदी मनुष्य होने की स्थिति पर संदेह करके वहाँ मात्र राजनीतिक चालों का होनाही स्वीकार करती है। युधिष्ठिर ने जुए का प्रस्ताव स्वीकार करके विदूर का सम्मान बढाया पर उन्हें लगता है, कि यह प्रस्ताव वे अस्वीकार करते तो उनका सन्मान कई गुणा बढ जाता।

मध्य / विकास -

जुआ खेल होने तक समस्त पात्र आशंकित है। गांधारी का मानना है - यह खेल यहीं समाप्त नहीं होगा। युद्ध मनुष्य को अपंग (अपाहिज) और दृष्टिहीन बना देनेवाली राजनीति है; लेकिन जो तीर चल चुका है उसे वापिस लेने की बात सोचना मुर्खता होगी।''[28] इस नाटक के अधिकतर पात्र खेल न होने के पक्ष में है। युधिष्ठिर निमंत्रण की मित्रता और संधि का प्रतीक, गांधारी पुत्र की इच्छा और अधिकारों का और सुयोधन अपनी कुंठाओं के शमन एवं स्वत्व प्राप्ति का प्रतीक मानकर चलता है। प्रहरी राज्य की वास्तविक अघोषित युद्ध की स्थिति, राजा की अंधी मनोवृति और प्रजा के दुखों का विश्लेषणात्मक संकेत करते हैं। दृश्य तीन में शकुनि के जुआ खेलने की मुद्रा में मंच पर कुटिल मनोवृति युक्त स्वगत कथन के रूप में संवाद उच्चारित होते हैं, जो व्यंग्यपूर्वक कुटिलता के दर्शक है। युधिष्ठिर से पांचाली, अर्जुन का गांडीव, युधिष्ठिर का सत्य एक हजार ऐसी दासियाँ जिन्होंने अभी गर्भ धारण नहीं किया। भीम की गदा, नकुल-सहदेव के रूप को एक के बाद एक क्रमशः दांव पर लगवा देता है। शकुनि के कहने से दुःशासन द्वारा द्रौपदी को सभा में लाना और उसकी आज्ञा से निर्वस्त्र करने के प्रयास आदि सब शकुनी की दृष्ट वृति का परिचय देते हैं।

---

28. गिरिराज किशोर - 'प्रजा ही रहने दो', पृ.14

"कौरव-पांडव जुआ खेलते हैं किंतु दांवपर चढ़ाया जाता है द्रौपदी को, मानो वह कोई वस्तु या यंत्र हो उनकी दृष्टी में औरत औरत नहीं माटी का बुत है।"[29] नारी केवल पुरूष की वासना पूर्ति का साधन मानी गयी है। नारी के प्रति घिनौनी दृष्टि, नारी शोषण के विविध आयाम, राजा, नेताओं की हीन दृष्टि और भोगवासना की प्रवृति आदि का यहाँ चित्रण हुआ है। जो आज की व्यवस्था में रहा है। हो सकता है शकुनी बदले - द्रौपदी अलग रही परंतु शासक की नारी के प्रति देखने की दृष्टि तो नहीं बदली। नारी का आक्रोश वही रहा - शासक गुंगे-बहरे बनकर कार्य करते हैं। नारी रक्षा की दुहाअी मांग रही है। मगर कौन सुनेगा? कौन न्याय देगा? यही सवाल आज भी है। एक अनोखा मिथक सही स्थिति पर करारा व्यंग्य कर रहा है। नागरिक राजा को अंधा और स्वार्थी मानते हैं, क्योंकि उन्हें मात्र प्रजा का हित ही दिखाई नहीं पड़ता जबकि उन्होंने अपने हित को कभी अनदेखा नहीं किया। नागरिक धृतराष्ट्र, गांधारी और शकुनि आदि शासक वर्गपर व्यंग्य मिश्रित टिप्पणी करते हैं। युधिष्ठिर द्वारा द्रौपदी और राज्य को हारने के पश्चात बनवास जाने की आवाजे आती हैं। प्रजा सामान्य होने के कारण उसपर अन्याय होता है। प्रजा का नित्य शोषण दमन होता है। यहाँ यह संकेत दिया है की जबतक प्रजा जागृत नहीं बनेगी, तबतक उसका हरबार शोषण होता रहेगा। सामान्य जनता का रक्षक कोई नहीं न राजा और न व्यवस्था। राजा अंधा, व्यवस्था गुंगी तो शासन कुव्यवस्था का प्रतीक ही होगा। यही संकेत प्रस्तुत नाटक के द्‌वारा दिया है।

कौरवों द्‌वारा जब द्रौपदी को बेइज्जत किया तब प्रजा का खून खौला उठता है। उसकी तो यही प्रतिक्रिया है कि, "मेरी घरवाली के साथ ऐसा किया होता.... और कुछ नहीं तो उसका हाथ पकडकर ऊपर से नीचे तो कुद ही जाता।"[30] भारतीय समाज ने सदा ही नारी को संम्मान इज्जत दी है। मगर महाभारत काल की द्रौपदी की घटना से यह मान्यता ध्वस्त होती है। ऐसा कहा

---

29. डॉ.सरिता वाशिष्ट - 'युगबोध और हिंदी नाटक', पृ.11
30. गिरिराज किशोर - 'प्रजा ही रहने दो', पृ.49

जाता है जब नारी की इज्जत पर हाथ उठाया गया तब वह राज्य ऱ्हास की ओर बढ़ा यही यहाँ होता है। आज भी द्रौपदी है - दुशासन राज कर रहे हैं, तो भविष्य का भी पता है यही यहाँ स्पष्ट किया है। भीम, अर्जुन, द्रोण, गुरूजनों पर उन्हें गुस्सा आता है। जब वनवास जानेवाली द्रौपदी को कुंती नकुल-सहदेव का ध्यान रखने के लिए कहती है तब व्यंग्य से द्रौपदी कहती है - "अवश्य रखुँगी माँ जब पति पत्नी का भार सँभालने में असमर्थ होते हैं तो पत्नी को ही पति का भार वहन करना होता है।"[31] यहाँ विद्रोही नारी का करारा व्यंग्य ही है।

कुंती और विदूर द्रौपदी को बेटी कहकर पुकारते हैं तो द्रौपदी उन्हें बेटी और बहू का भेद स्पष्ट करते हुए बहु ही पुकारने की बिनती करती है। बहू कहने से थोडी मुक्ति मिलती है ऐसा वह मानती है। द्रौपदी मन से बहुत दुखी है पाँच पतियों की पत्नी होने की नियति से अत्यंत क्षुब्ध है।

इससे नारी मनोविज्ञान स्पष्ट होती है। बहुपतिद्वारा शोषित नारी द्रौपदी नारी जिंदगी को दर्शाती है। धृतराष्ट्र के कक्ष से चौथा दृश्य आरंभ होता है। धृतराष्ट्र के आंतरिक विश्लेषण और धृतराष्ट्र, सुयोधन, गांधारी, विदूर, कर्ण आदि के बीच युद्ध विषयक चर्चा, पाण्डवों को पाँच गांव देने के प्रस्ताव पर विचार होता है। सुयोधन पाण्डवों की विस्तारवादी नीति का पुराना उदाहरण देकर प्रस्ताव रद्द कर देता है। यही विदूर और कर्ण के एक-दूसरे पर लगाये आरोपों-प्रत्यारोपों से पता चलता है कि कर्ण कुंती की सूर्य से उत्पन्न, विवाह पूर्व की संतान है। कृष्ण ने कर्ण को पाण्डवों के साथ मिलने के लिए अनेक प्रलोभन दिखाए जिनमें राज और द्रौपदी प्रमुख है।

यहाँ स्पष्ट है राजनीति में शत्रुपक्ष को कमजोर करने के लिए लालच दिखाया जाता है। भ्रष्ट तरिकों को अपनाकर कोई बुरा नहीं मानता - जिसे-कृष्ण ने कर्ण के साथ किया वही रास्ता आज भी राजनीति में अपनानेवाले शासक दिखाई देते हैं। इसपर यहाँ प्रकाश डाला है। सुयोधन मानता है कि उसकी ओर सब टुटे

---

31. गिरिराज किशोर - 'प्रजा ही रहने दो', पृ.101

और बँटे हुए महारथी हैं। मात्र गांधारी से ही संपूर्णता का अनुभव कर उनसे सफलता का आशीष मांगता है। गांधारी अमर्ष में बांधी पट्टी के प्रायश्चित के निमित दशकों से संचित नेत्र ज्योति डालकर सुयोधन का शरीर वज्र करने के उद्देश्य से सुयोधन को निर्वस्त्र होने के लिए कहती है क्योंकि सुयोधन के निर्वस्त्र हुए शरीर पर जहाँ-जहाँ गांधारी की दृष्टी पड़ेगी वही से शरीर वज्र हो जाएगा। सुयोधन पूर्ण रूप से निर्वस्त्र नहीं होता तब गांधारी उसको देखते ही चिंतित हो उठती है। युद्ध में उस अंग की रक्षा करने को कहती है। यहाँ गांधारी का सत्व, पुत्रप्रेम, युद्ध में सफलता की कामना आदि बाते स्पष्ट होती हैं।

पाँचवे दृश्य के एक भाग में कुंती एवं विदूर तथा दूसरे भाग में धृतराष्ट्र एवं गांधारी युद्ध विषयक चर्चा कर रहे हैं। संजय मुर्तिवत युद्ध क्षेत्र का हाल सुना रहा है। कुंती को अपने संतान के बारे में चिंता सताये जा रही है। धृतराष्ट्र एवं गांधारी युद्ध समाचार सुनने के लिए व्याकुल है। कुंती हार-जीत न मानकर अपने संतान की रक्षा चाहती है। कुंती इस युद्ध का उत्तरदायित्व अपने उपर लेती है। गांधारी भीष्म की बहादुरी को शत्रु के बजाय सम्बधी के साथ युद्ध कहकर कायर कहती है। धृतराष्ट्र युद्धभूमी में किसी महारथी के मरने से आशंकित होते हैं। संजय बताता है भीष्म अर्जुन के बानों से घायल होकर रणक्षेत्र में गिर पडे हैं। धृतराष्ट्र भीष्म की मौत धुर्त कृष्ण के चालों से मानते हैं। धृतराष्ट्र फिर से कुंती और गांधारी को युद्ध रोकने को कहते हैं। प्रतिशोध की अग्नि में जलती द्रौपदी के बारे में गांधारी कहती है - 'उसके एक पति मरने से वह विधवा हो जायेगी यहा स्पष्ट है नारी की प्रतिशोध की भावना युद्ध कारण है तथा इतिहास में ऐसे कई युद्ध हो चुके हैं। यही सच्चाई है।

अंत -

छठे दृश्य में नाटक का अंत होता है। इस में युद्ध के पश्चात की त्रासदी चित्रित है। घायल नागरिकों एवं प्रहरियों की बातचीत से स्पष्ट है कि राजाओं की लिप्सा की शिकार साधारण जनता और सिपाही ही है जो युद्ध में मारे जाते हैं, उन्हीं के बच्चे अनाथ होते हैं। जीवित रहने का अधिकार तो मात्र तलवार

और राजा को ही है। विजयश्री के पश्चात युधिष्ठिर धृतराष्ट्र और गांधारी से प्रणाम करने आते हैं। युधिष्ठिर अनुभव करते हैं कि युद्ध में विजयी होकर लौटना कितनी बड़ी प्रवंचना है। कुंती के राजमहिर्षी कहने पर द्रौपदी समस्त संबोधनों को छोड़ अपने को वंश परंपरा व जाति विहीन धरती की गोद से उगनेवाली 'घास' मानती है। गांधारी द्रौपदी को कुलीनता का तर्क देकर खोया-पाया से ऊपर उठकर राजसिंहासन की ओर देखने को कहती है। धृतराष्ट्र पुराने युग की समाप्ति व नये युग का आरंभ मानते हैं। जिसमें कुंती के अनुसार प्रजा अपने दुःख को स्वयं वहन करेगी और धृतराष्ट्र के अनुसार 'राजा अपनी जय-जयकार स्वंय करेगा। लेकिन द्रौपदी प्रजा को (अपने को) प्रजा ही बने रहने की प्रार्थना करती है। वह कहती है - ''मुझे यही रहने दो। अपनी चक्की में ही पिसने दो। मुक्त होने दो। प्रजा को प्रजा ही रहने दो।''[32]

यहाँ द्रौपदी की अर्त व्यथा है। प्रजा को प्रजा रहने से वह सुखी बनेगी अधिक सत्ता की लालसा दिलाने से विद्रोह, संघर्ष निर्माण होता है। इसी कारण वह प्रजा ही रहे । नाटककारने आज की शासन-व्यवस्था को महाभारत कालीन शासन-व्यवस्था का ही पर्याय मानते हुए उसके समानांतर प्रस्तुत किया है। जिस शासन-व्यवस्था में कल्याणकारी धर्म नीतियाँ नहीं के बराबर थी और जिस परिवार के शासन की कुलाघाती अंधी नीतियाँ ने शासित प्रजा को कुंठा और दिशाहीनता के शिवाय कुछ नहीं दिया।''[33] यह कथन यहाँ यथार्थ लगता है।

निष्कर्ष -

नाटककार गिरिराज किशोर कृत 'प्रजा ही रहने दो' नाटक महाभारत कालीन युद्ध के कारण और दृष्परिणामों से राजनीति मूल्यहीनता का नाटक है। महाभारत काल में मानव मन की दुषित मनोवृतियाँ नष्ट नहीं हुई बल्कि यह प्रसंगोत्पात यंत्र-तंत्र दृष्टिगोचर होती है। छल-बल से सताई प्रजा के स्वर को मुखरित करनेवाला यह नाटक समसामायिक जीवन संबंधी कई पक्षों को

---

32. गिरिराज किशोर - 'प्रजा ही रहने दो', पृ.110
33. रमेश गौतम - 'मिथक और स्वातंत्र्योतर हिंदी नाटक', पृ.165

मनोवैज्ञानिक धरातल पर रेखांकित करता है। इसमें पात्र महाभारतकालीन हैं किंतु वर्तमान जीवन संबंधी समस्याओं से घिरे हुए है। इस नाटक में नाटककार ने प्रजा के मनोविज्ञान और पीडाजन्य कुंठा को सुंदर ढंग से उद्घाटित किया है। गिरिराज ने इस नाटक में नारी की दीन-हीनता को ही अंकित नहीं किया बल्कि द्रौपदी के माध्यम से उसकी करूण त्रासदी को भी आलोकित किया है। सत्ता लोलुपता वर्तमान जीवन का कटू यथार्थ है। सत्ता की भूक व्यक्ति में बढती ही जाती है। नाटककार ने दुर्योधन के द्वारा मानव मन की अराजक वृति का अंकन प्रस्तुत किया है। इसमें केवल दुर्योधन ही नहीं बल्कि समुचा वंश डूब जाता है। कुंती और गांधारी का संतान के प्रति मोह को भी चित्रित किया गया है।

जुए के खेल की विनाशक परिणति को भी इस नाटक में विवेचित किया है। कौरव-पांडवों के बीच खेला गया जुए का खेल ही उनके विनाश का कारण है। षड़यंत्र, धोका धडी से किया गया व्यवहार समाज, जनता के लिए हानिकारक ही है - इसपर प्रकाश डाला है।

युद्ध के भीषण परिणामों को इस नाटक में प्रभावी ढंग से बताया गया है। युद्ध संहारक और हानिकारक होता है। वर्तमान राजनीति में प्रचलित चापलूसी पर व्यंग्य किया है। युवा पीढ़ी में अपने अधिकारों के प्रति जागरूकता है किंतु कर्तव्य और संस्कारों के प्रति नहीं। इस नाटक का सुयोधन उस संस्कार हीन पीढ़ी का प्रतीक है, जो माता-पिता के प्रति कटू व्यंग्योक्तियाँ सुनाता है। इसके साथ प्रजा की पीड़ा और अन्याय को प्रकट किया है। इसके अतिरिक्त कामवासना, भोग की उद्दाम वांछा, शक्ति का प्रभाव जाति-प्रेम, अवसरवादिता आदि समस्याओं पर भी नाटककार ने प्रकाश डाला है। राजनीतिक समस्याओं पर व्यंग्य करनेवाला गिरिराज किशोर का 'प्रजा ही रहने दो' नाटक सफल नाटक है।

मिथकीयता की दृष्टी से भी यह रचना प्रभावी कृति है। राजा, प्रजा जेता-हारे, युद्ध-शांति का मिलाप इसमें हुआ है। महाभारत का युद्ध किसी भी कारण हुआ हो, आज की राजनीति में भी इसके दर्शन होते हैं। सत्ता प्राप्ति यही युद्ध का कारण होने से आज आदमी की बरबादी होती है। अमन, शांति नहीं

रहती, यही संदेश दिया है। नारी के प्रति सन्मान रखना, प्रातहित को मानना सबके आधिकारों की रक्षा करना राजा का परमकर्तव्य रहा है जो इसका विरोध करेगा उसका ऱ्हास निश्चित है। यही सच्चाई है - इसपर भी सोचा है अतः इस दृष्टि से यह नाटक सफल है।

2.5.2 घास और घोड़ा -

गिरिराज किशोर के सामाजिक नाटक 'घास और घोडा' का प्रकाशन सन्1980 में सरस्वती विहार से हुआ है। आम आदमी की जिंदगी से जुड़ा, जनचेतना में योगदान देनेवाला नाटक है नाटककार समाज का अंग होने के कारण उनकी रचना समाज के लिए समाज से जुडी होती है। सामाजिक जीवन का चित्रण करके सामाजिक समस्या सुलझाने में सहयोग करना इस दृष्टी से गिरिराज किशोर का प्रस्तुत नाटक उपादेय लगता है।

"सामाजिक संदर्भ में सामाजिक प्राणी द्वारा सम्पन्न कार्य की सामाजिक क्रिया कहते हैं। सामाजिक संदर्भों में सामाजिक संगतियों-विसंगतियों, जीवनगत अभावों, जड़ताओं, जीवन-मूल्यों एवं विश्वासों और उनके बनते-बिगड़ते स्वरों से क्रियाशील मानसिकता निर्मित होती है। सामाजिक जीवन के संदर्भ में वही महत्त्वपूर्ण होती है।"[34] इस नाटक में विमला और प्रधान के बेटे में जो प्रेम और यौन संबंध है उससे उत्पन्न समस्या का चित्रण ही मुख्य कथा है। प्रथम दृश्य में लेखक की समस्या, अनुभव की प्रामाणिकता की समस्या को उठाकर वर्तमान लेखकों की समस्या, उनके आन्तरिक संकटों को कुछ हद तक उजागर किया है। इसमें मध्यवर्गीय परिवार की बिगड़ती हुई स्थिति, शादी ब्याह की समस्या, लडकी की स्थिति, अर्थात हमारी भ्रष्ट सामाजिकता का चित्रण इस नाटक में किया गया है। इसमें पुलिस दरोगा, अपराधी, जज के अत्याचार, भ्रष्टाचार, अन्याय, बेईमानी और लापरवाही के बर्ताव के दर्शन होते हैं। जिनके द्वारा घुसखोरी, भ्रष्टता और मानवीय मूल्यों के पतन का चित्रण किया गया है। इसमें समाज, कानून और न्याय व्यवस्थापर करारा व्यंग्य किया गया है। इस नाटक

34. डॉ.प्रकाश चिकुर्डेकर - रामदरश मिश्र के उपन्यासों में समाज जीवन, पृ.103

के बारे में गिरिश रस्तोगी का मत है ''वस्तुतः 'घास और घोडा' नाटक का महत्त्व गिरिराज किशोर के कथा से नाटक तक आने की प्रक्रिया का अध्ययन करने की दृष्टि से अधिक है।''[35] इस नाटक की कथावस्तु में समसामायिक परिस्थितियों का चित्रण हुआ है।

आरंभ -

लेखक की बेचैनी से नाटक शुरू होता है। ''मेज पर कागज बिखरे हैं। लेखक उन कागजों को क्रम से लगा रहा है। कागजों को लगा लेने के बाद उसके चेहरे पर प्रसन्नता का भाव आता है। उन्हें पढ़ने लगता है। पढ़ते-पढ़ते गंभीर होता है। धीरे-धीरे चेहरे पर परेशानी उभरने लगती है। कभी खड़ा होता है, कभी बैठता है। काटता है, लिखता है। फिर काटता है फिर लिखता है। टहलता है। संवाद बोलकर देखता है।''[36] इससे उनकी मनस्थिति स्पष्ट होती है। अस्थिरता मानवी मन की एक प्रवृति है जो माना के स्वास्थ्य को हानी पहुँचाती है।

अस्थिरता और संघर्ष हानीकारक होता है। किरण बेदी के शब्दों में ''अस्थिरता हमेशा विकास के लिए गतिरोध बन जाती है। अस्थिरता में शांतिभंग होती है। इसका प्रभाव स्वास्थ, शिक्षा पर पडता है।''[37]

लेखक की बेचैनी उसकी असमर्थता इसमें है कि - वह जो चाहता है वह लिख नहीं सकता क्योंकि समय आगे बढ़ रहा है और लेखक पीछे। समय के साथ न दौड सकने की आन्तरिक पीड़ा उलझन की गिरिराज किशोर ने लेखक की परेशानी बढ़ती जाती है। वह शीघ्र ही नाटक का मंचीकरण के लिए व्याकुल है क्योंकि समय कम है। निर्देशक हिंदी रंगमंच की वास्तविक स्थिति की ओर संकेत करता हुआ कहता है - ''इस मंच की तरफ देखो। इतने दिन से खाली है। न कोई जिया, न मरा न रोया, न गाया, बस उछला कुदा और चला गया।''[38]

---

35. गिरिश रस्तोगी - 'समकालीन हिन्दी नाटककार', पृ.92
36. गिरिराज किशोर - 'घास और घोड़ा',पृ.11
37. किरण बेदी - 'मोर्चा-दर-मोर्चा',2002 - स्वर्ण जयंति, दिल्ली,पृ.80
38. गिरिराज किशोर - 'घास और घोड़ा',पृ.18

अपने-अपने संवादों की माँग करते हुए रंगकर्मी अपने और लेखक के बीच की दूरी और समस्या को व्यक्त करते हैं। वह कहता है - "तुम लिखों, हम खेले, तुम सोचो, हम झेलें..... हमें नये संवाद दो। हमारे संवाद दो। सबको सबकी बात दो।"[39] लेखक कागज फेंक देता है, जो कागज जिसके हाथ में आता है वह उसे पढ़ने लगता है। निर्देशक भी एक कागज उठाता है और अपने अपने अभिनय करने के लिए संवाद पढ़ने लगते हैं और उन संवादों का मजाक उडाने लगते हैं। जैसे - "ठहरों इन संवादों को इस तरह मत बिखेरों। अपनी बात कहो। दूसरों की कही हुई बात इन्सान की अपनी तकलीफ कभी नहीं हो सकती। इस तरह उसका मजाक मत उडाओं।"[40]

निर्देशक उन्हें बुलाकर एक-एक पात्र को उनका पार्ट समझाता है। पंड़ित हजारीलाल का पार्ट, विमला का पार्ट, जज का पार्ट, देकर उन्हें क्या करना है यह समझाता है।

विकास / मध्य -

संस्कृत पाठशाला के हेडमास्टर पंडित ख्यालीराम के अस्त-व्यस्त पडे मकान के चित्रण से नाटक का विकास होता है। रसोई में ख्यालीराम की पत्नी भंग पिसती नजर आती है। लड़का द्वारिका पढाई कर रहा है। उसपर दूसरे लडके व्यंग्य करते हुए कहते हैं - "उसे पंडित जी, कहाँ कानून-वानून के चक्कर में पड गए। तुम पढ़ गए तो घुरऊ भी कानून पढ़ जाएगा! चुटिया रखाकर कथा बांचो... पिता को गुरू मानकर माँगने-खानेवाली विद्‌या को घरसे बाहर जाने से रोको.....।"[41]

उन लडकों की ओर ध्यान न देकर वह ज्युरिसप्रुडेन्स की परिभाषा याद करने लगता है। पंडित ख्यालीराम अपने बेटे की विवाह की बात करते हैं। उनके पाठशाला के अध्यक्ष विधान-परिषद के सदस्य पंडित हजारीलाल अपनी

39. गिरिराज किशोर - 'घास और घोडा', पृ.18
40. वही,पृ.21
41. वही, पृ.25

बेटी का रिस्ता पंडित ख्यालीराम के बेटे से करना चाहते हैं। पं.हजारीलाल को अच्छा लगने के लिए पंडित ख्यालीराम घर की सफाई करने को कहते हैं। पंडिताइन प.हजारीलाल के आने की खुषी में घर में सामान लाने की तैयारी करती है। प.हजारीलाल बेटी के जाट ड्राइवर के साथ के संबंधों के कारण परेशान है। वे जल्दी से उसकी शादी करने के लिए बेचैन है। किंतु हजारीलाल की पत्नी को द्वारका पसंद नहीं है। वह अच्छा वर ढूँढने के लिए कहती है। प.हजारीलाल कहते है - "(नाराजगी से) तुम्हारी बेटी ने तो जाट ड्राइवर चुना था, क्या वह उससे भी गया गुजरा है।"[42]

पं.हजारीलाल की ये बाते उनके पत्नी को बुरी लगती है। बेटी के कारण प.हजारीलाल को कहीं मुह दिखाने की जगह नहीं, इसकारण वे उसकी जल्दी-से-जल्दी शादी करने के लिए पंडित ख्यालीराम के घर जाते है। प.हजारीलाल का आना यानी अपनी कुटिया को पवित्र करना ऐसा पंडित ख्यालीराम मानते हैं। पंडिताईन पं.ख्यालीराम को लड़कोंवालों की तरह बात करने को कहती है। पं.हजारीलाल द्वारका की पूछताछ करते हैं। प.हजारीलाल द्वारका से रिश्ता तय करते हैं। साथ ही पंडित ख्यालीराम को संस्था का वैतानिक मंत्री नियुक्त करते हैं।

दृश्य एक में प्रधान का बेटा विमला को भाभी पुकारता घर में आता है। विमला को इशारा करता है। विमला के भाई को जानवर कहता है। अपने आप को विमला का देवर कहता है। विमला प्रधान के बेटे के उसके पति की गैरहाजरी में आने से परेशान है। प्रधान का बेटा विमला से उसके भाई को बाहर भेजने के लिए कहता है। वरना खुद उन दोनों की सेवा करने की धमकी देता है। विमला उसके इस बात से दुःखी हो जाती है और बताती है कि - "इन लोगों से तो फिर भी मेरा असली रिश्ता है।" पति के आने का वक्त होने के कारण विमला प्रधान के बेटे को जाने के लिए कहती है। विमला की नाराजगी से प्रधान का बेटा जाता है।

विमला अपने भाई को दुकान जाकर अपने जीजाजी का हाथ बटाने

42. गिरिराज किशोर - 'घास और घोडा', पृ.60

के लिए कहती है। विमला का भाई विमला को बताता है की "जीजा को प्रधान के बेटे का आना पसन्द नहीं।"[43] कहकर वह जाता है। इतने में प्रधान का बेटा आता है विमला उसे बताती है कि "अपने लिए एक औरत ले आओं पराई औरत औरत कम कठपुतली ज्यादा होती है। और औरत भी उन्हींकीं हुं....।"[44] ये सुनते ही प्रधान के बेटे को गुस्सा आता है और वह उसे धमकाता है। यहाँ नारी के प्रति दृष्टिकोन स्पष्ट होता है। समाज में स्थित अनैतिकता और मूल्यहीनता के यहाँ दर्शन होते हैं। विमला अपने भाई की बात को मानने के लिए प्रधान के बेटे को न आने की सलाह देती है। प्रधान के बेटे को गुस्सा आता है। विमला का पति और प्रधान के बेटे के बीच संघर्ष होता है। उससे अपने घर की बरबादी होने की बात करता है। विमला परेशान हो जाती है। विमला प्रधान के बेटे को अपना घर बरबाद न करके चले जाने को कहती है। प्रधान का बेटा विमला के लिए उसके पति का कत्ल कर देता है। मुकदमा शुरू होता है। प्रधान दरोगा को रिश्वत लेकर अपने बेटे को छूडाने की बात करता है।

"भ्रष्टाचार व्यक्ति का वह आचरण है जो अन्य व्यक्तियों के स्वार्थ या समाज के हित की अपेक्षा करते हुए भी नीजी स्वार्थ की सिद्धी में सहाय्यक होता है प्रशासनिक, राजनीतिक, व्यवस्था, शैक्षणिक और धार्मिक आदि में भ्रष्टाचार होता है।"[45]

डॉ.अनिता रखत ने भ्रष्टाचार का कारण राजनीतिक तथा राजनेता को माना है। वे कहती है,"आज सर्वज नौकरशाही भ्रष्टाचार, दावंपेच की राजनीति और नैतिक मुल्यों का पतन हो रहा है, जिसके जिम्मेदार हमारे नेतागण है।"[46] यह कथन यहाँ यथार्थ लगता है।

---

43. गिरिराज किशोर - 'घास और घोडा', पृ.62
44. वही,पृ.63
45. डॉ.मुहम्मद फरीदुददीन - राही मासूम रजा के उपन्यासों का समाज शास्त्रीय अध्ययन, पृ.12
46. डॉ.अनीता रखत - अमृतलाल नागर के उपन्यासों में आधुनिकता,पृ.26

दरोगा पैसे लेता है और प्रधान के बेटे को भला बुरा कहता है। उसे छोडकर गवाहों को तैयार करने की सलाह देता है साथ ही विमला को भी झूठी गवाही देने के लिए तैयार करने के लिए बताता है। प्रधान, दिवानजी और दरोगा के सामने विमला के भाई की झुठी कहानी का बयान करता है कि - ''लेकिन उसका साला महा बदचलन! हर वक्त उसकी जान खाए रहता था' - ला पैसे! शाम को ही साले-बहनोई की कहा सुनी हुई, मार-पिटाई की नौबत तक आ गई । वह मांग रहा था, रामनिरख कह रहा था - कहां से दुं। जब उसने बहुत तंग किया तो राम निरख बिगड गया। हालांकि वह कभी नाराज नहीं होता था पर उस दिन तो होनी उसके सिर पर सवार थी। उसने धक्का देकर निकाल दिया। बाद में..... उसी रात ही को यह सब हो गया।''[47]

दरोगा दिवान को ये सब लिखने को कहता है। दरोगा को सलाह देता है ''वकील मजबूत हो तो मुकादमा आधा जीता, गवाह भी मजबूत हो तो तीन-चौथाई जज तो एक-चौथाई में रहते हैं। एक बात का ध्यान रखना उधर की पैरवी तगडी न होने पाय।''[48] साथ ही विमला की तरफ से रपट दर्ज करने का मश्वरा देता है।

कोर्ट में मुकदमा चलता है। मुलजिम बने विमला के भाई को स्टेट की तरफ से वकील देती है। मुकदमें के शुरू में गवाह नं.एक प्रधान का बेटा आता है और अपनी झुठी गवाही देता है वह विमला के भाई पर खून का इलजाम लगाता है। दरोगा विमला को प्रधान के बेटे की तरफ से गवाही देने को कहता है। विमला को अदालत में बुलाते हैं और सवाल पूछते हैं वह जवाब नहीं देती इस कारण उसके चुप रहने से उसके भाई को फाँसी होती हैं। और प्रधान का बेटा फिर से विमला को भोगने को तैयार होता है। यहाँ भ्रष्ट पुलिस-व्यवस्था, जज की स्थिति, झूठी गवाही देनेवालों की बढती आबादी और बेकसुरों को मिलनेवाली फाँसी आदि घटनाएँ चिंता के विषय है - आज भी यही हाल है। समाज-व्यवस्था का सही चित्रण हुआ है।

---

47. गिरिराज किशोर - 'घास और घोड़ा', पृ.80-81
48. वही, पृ.81-82

अंत -

अंत जज की बेचैनी से होता है। जज की बेटी फाँसी लगाने की बात कहती है जज उसे डाटते है, बेटी को फाँसी देने की बात से जज की बीवी उनपर क्रोधित हो जाती है। जज परेशान होकर टहलते हैं उन्हें मुलजिम के रूप में बैठा विमला का भाई नजर आता है। वे उसे बताते है कि "चुप रहने का मतलब जुल्म का इकबाल होता है। तुमने चुप रहकर अपने बहनोई का खून का इलजाम लिया।"[49] तब मुलजिम अपने आपको निर्दोश मानकर कहता है - "तुम समझते हो, मैं तुमसे फरियाद करने आया हुँ.... यह जताने आया हुँ कि मैं निर्दोष हुँ कानून के दूवारा दी गई फाँसी से मरू या प्रधान के बेटे की गैर कानूनी गोली से.... क्या फर्क पडता है।"[50] यहाँ प्रधान का आतंक और मजबूर न्याय के दर्शन होते हैं।

जज समझ जाते है कि खुन किसी और ने किया है। जज के घर विमला आती है, वे उसे कातिल, बदचलन, स्वार्थी, दो कौंडी की औरत कहते है। जज विमला से उसके और प्रधान के बेटे के इश्क के बारे में पुछते हैं। इतने में पेशकर आता है। विमला और भाई के बारे में बाते करता है। जज टाइप बाबू से अनापशनाप बाते करते हैं। विमला के भाई के मुकदमें के फैसले का बहुत ही बुरा असर उनपर पडता है। यहाँ जज की बुरी हालत से नाटक समाप्त हो जाता है।

निष्कर्ष -

यह नाटक सामाजिक परिस्थितियों का यथार्थ चित्रण करता है। पंडित हजारीलाल और पंडित ख्यालीराम के बीच रिश्ता जोडने में अपनी-अपनी स्वार्थ भावना रही है। नारी के गिरते चरित्र का चित्रण विमला और पं.हजारीलाल की बेटी के माध्यम से हमारे सामने रखा गया है। प्रधान के बेटे में भोगवादी प्रवृति अहंम है। जो अपनी इच्छापूर्ति के लिए हत्या तक कर देता है। प्रधान की गवाही उसके झूठेंपन को दर्शाती है। इस नाटक के हर एक पात्र में वर्तमान स्थिति के दर्शन

---

49. गिरिराज किशोर - 'घास और घोडा', पृ.104

50. वही,पृ.104

मिलते है। इसमें आधुनिक समाज जीवन के विविध पक्षों का ही चित्रण किया है। विमला के माध्यम से शादी के बाद के अनैतिक संबंधों की समस्या को स्पष्ट रूप से बताया गया है। और उसके कारण मानव की मनोवृति में होता अच्छा बुरा परिवर्तन दिखाई देता है।

आज के वर्तमान युग में रिश्ते नातों की कोई एहमीयत नहीं रही पहले जैसा लगाव तथा प्यार नहीं रहा। विमला प्रधान के बेटे और दरोगा के कहने पर अपने भाई को फाँसी पर चढते देखती है। इससे आधुनिक युग के टूटते संबंधो का बिखरते रिश्तों का चित्रण दिखाई देता है। प्रधान का अपने बेटे को छूडाने के लिए दरोगा को रिश्वत देना कानून और पुलिस-व्यवस्था के भ्रष्टाचार को उजागर करता है, और जज का फैसला न्याय-व्यवस्था पर करारा व्यंग्य करता है। इस नाटक में समाज में चल रहे आज के वर्तमान युग का चित्रण मिलता है। साथ ही आधुनिक सामाजिक-व्यवस्था और टुटते परिवार का चित्रण है।

इसमें बडे लोग निम्न वर्ग के लोगों पर किस प्रकार अन्याय-अत्याचार करते हैं इसका भी उदाहरण विमला के भाई को हुई सजा से पता चलता है। जज हुआ तो भी वह एक इन्सान है, उनपर जो इस मुकदमें का बुरा असर पडता है वह उनकी बेचैनी से पता चलता है।

गिरिराज किशोर का 'घास और घोडा' यह सामाजिक नाटक समाज का सच्चा दर्शन कराता है। समसामायिक परिस्थिति को दर्शाता है। किशोरजी का ये नाटक सफल नाटक है, इसमें संदेह नहीं। सामाजिक समस्या समाज की विकृत मनोवृति तथा भ्रष्टाचार की प्रवृति का सही अंकन हुआ है। एक सफल नाट्यरचना रही है।

2.5.3 चेहरे चेहरे किसके चेहरे -

आजादी के पश्चात बदली-बिगडी राजनीतिने साहित्य के लिए नए-नए विषय दिए है। साहित्यकारों ने अपनी प्रतिभा से इसे और भी गहरा और व्यंग्यपूर्ण बनाया है। राजनीति विकास के बजाय संघर्ष और भ्रष्ट आचरण का कारण बनी है। सत्ता प्राप्ति , अधिकार प्राप्ति, चुनाव, भ्रष्टाचार, कत्ल, लालच,

झूठे वायदे, नारेबाजी से सजी राजनीति और आम आदमी के शोषण का प्रतीक है। सजग साहित्यकारों ने ऐसे भ्रष्ट नेताओं की पोल खोली हैं। सुसत्ता, लोकतंत्र, समाजवाद, समता जैसे घिसे-पीटे शब्द आज कागज पर ही सुंदर लगते है। इसपर भी प्रकाश डाला है।

राजनीति, राजनेता की प्रवृति, राजनीति का बदला रूप और सत्ता धर्म राजनीति का चित्रण करनेवाली रचना राजनीतिक बनती है। साहित्यकार को राजनीति से दूर रहकर तटस्थ भाव से कलम चलानी चाहिए। डॉ.लोखंडे के शब्दों में "भारतीय समाज में लेखन की कोई स्वतंत्र सत्ता नहीं होती, साहित्यकार की राजनीति से दूर रहना चाहिए लेख को चाहिए की बडी जागरूकता के साथ वह अपने समय की राजनीति समाजशास्त्रीय तथा आर्थिक ढाँचा कुल मिलाकर सामाजिक संरचना को समझे।"[51]

साहित्य और राजनीति का परस्पर संबंध है, एक साधन दूसरा साध्य है। "सामाजिक-राजनीतिक मूल्यों में विशिष्टता और उपादेयता लाने के लिए साहित्य उपयोगी रहता है। अतः राजनीति को सुचारू बनाने के लिए साहित्य अपनी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाना है। राजनीति यदि वास्तविक पात्रों और परिस्थितियों का बहुआयामी चित्रणों के माध्यम से व्यक्त हो तो वह साहित्य प्रासंगिक बना सकता है।"[52] यह कथन इस रचना पर लागू होता है।

गिरिराज किशोर का 'चेहरे-चेहरे किसके चेहरे' यह राजनीतिक नाटक है। इसका प्रकाशन सन्1983 में लोकभारती प्रकाशन से हुआ है। इस नाटक का पहला मंचन दिल्ली की संस्था 'शून्य' द्वारा किया गया था। दूसरा मंचन संस्कृत विश्वविद्यालय वाराणसी के सभागार में किया गया था। युवा निर्देशक बंशी कौल ने थियेटर को घटना नहीं - सस्पेन्स कहते हुए इस नाटक के संदर्भ में कहा कि "अपने नये नाटक 'चेहरे-चेहरे किसके चेहरे' के लिए गिरिराज

51. डॉ.अरूण लोखंडे - समकालीन हिंदी कथा साहित्य में जनचेतना ,पृ.53

52. आंकल्प - 1978,पृ.34

किशोर जी ने जो तरीका अपनाया था, जिस प्रक्रिया से गुजरे है उसके बिना इस रूप में लिखा जा सकना संभव ही नहीं था। इसकी सार्थकता पढ़ी जा सकने में नहीं मंचित हो सकने की सम्भावनाओं में है। मैं समझता हूँ कि यह इन्टरेस्टिंग स्क्रिप्ट है।''[53] बंशी जी के इस मत के समान ही गिरिश रस्तोगी का मत है वे कहते हैं, ''इस नाटक की सार्थकता इसके पढ़े जा सकने में उतनी नहीं जितनी इसके मंचित हो सकने की विभिन्न सम्भावनाओं में है।''[54]

इस नाटक में केवल, एक,दो, तीन, चार, पाँच बिना नाम, रूपरेखा और वेशभूषा संकेत के सात दृश्यों में विभिन्न भूमिकाएँ निभाते हुए पात्र है, जो जन-पीडा एवं जनता की आवाज को, उसकी स्थिति समस्या और करूणा को व्यक्त करते हैं। इस नाटक के पात्रों में महान चेहरा महत्त्वपूर्ण है। कोरस का प्रयोग हर दृश्य के आरंभ में है। कोरस और उसके साथ गतियों के स्वरूप और संगठन से ही सारे तनाव एवं वातावरण की सृष्टी होती है। इसमें मतलबी राजनीति की चर्चा होती है। इनके बीच सत्ता प्राप्ती की लालसा है। इसी कारण इनके बीच कुर्सी का संघर्ष है। यही मुख्य कथा है। सभी पात्र मुखौटे पहने हैं। ये मुखौटे ही व्यंग्यार्थ को सम्प्रेषित करते हैं। बात केले और आम के पेड़ की करते हैं। इन की बातों में केला चोर है और आम साहुकार ऐसा मानते हैं। ये सभी मिलकर जनविरोधी पेडों को काटने के लिए तैयार हो जाते हैं और पेड काटना शुरू करते है। ये सभी लोग 'बहुजन हिताय बहुजन सुखाय' को मानते हैं।

आरंभ -

'चेहरे-चेहरे किसके चेहरे' नाटक की शुरूआत कोरस से होती है। मंच पर एक गोल बड़ी मेज के चारों ओर पाँच कुर्सियाँ। बहुत से आदमी कुर्सियों के चारों ओर दौड रहे हैं। वे सब कोरस गाते जा रहे हैं।

---

53. छायानट - 'जुलाई' 1977, पृ.57

54. गिरिराज रस्तोगी - समकालीन हिंदी नाटककार, पृ.92

कोरस - लातम लात, खाओ भात

हाथों हाथ, झूठी बात[55]

कोरस गाते-गाते वे बहुत तेजी से भागने लगते हैं। गिरते या बैठते हैं, उनमें से पाँच कुर्सियों तक पहुँच जाते है। इस कोरस में भी आम आदमी की नियति और आज के समाज-व्यवस्था पर व्यंग्य किया है, जिसमें एक, एक, एक, ना अनेक, लाखों पेट और अरबों पेट इन शब्दों से देश कि बढ़ती आबादी का चित्रण हुआ है। साथ ही झूठी बात पर भी प्रकाश डाला है। आज के नेता झूठे वादे करते है अपनी सत्ता प्राप्ति के लिए आम आदमी को कुछ-न-कुछ (रिश्वत) देकर वोट लेते हैं और उनपर ही राज करते हैं साथ ही सत्ता प्राप्ति के लिए दंगेफसाद करके लोगों को आपस में लडवाते हैं। मारो लात खाओ लात इस शब्द से इसका पता चलता है। इस प्रकार आरंभ में ही देश के नेताओं की पोल खोल दी है। व्यवस्था पर व्यंग्य करके आम आदमी के जीवन का चित्रण किया है।

मध्य / विकास -

दृश्य दों में बीच की कुर्सी ऊँची है जहाँ महान चेहरा बैठा है। कुर्सियों के सामने चार मुखौटे रखे हैं, सेमिनार की पट्टिका लगी है। सेमिनार में महान चेहरा मानव जाति के कल्याण की योजनाएँ, लागू करने की बात कहता है। ये सभी अपना लक्ष्य मानव-कल्याण जन कल्याण मानते हैं। और हर समस्या को हल करने के लिए तैयार होते हैं। इसके लिए वे अपने परिवार जाति और नगर सभी को छोडने का निश्चय करते हैं। सभी मिलकर 'बहुजन हिताए बहुजन सुखाए' का मंत्र बोलते है, और इसे परम सत्य, अपना लक्ष्य और धर्म मानने की प्रार्थना करते हैं। महान चेहरा जो शोषित है, नक्की में पिसते रहे हैं उन्हें ऊपर लाने के लिए जनतंत्र का तरीका अपनाने की बात करता है।

'हम स्वतंत्र है, उस दकियानुसी तरिके से नहीं बिलकुल नये तरीके से' जैसे वाक्य प्रजातंत्र और स्वतंत्रता का मजाक उड़ाते हैं। दृश्य तीन में आदेश

---

55. गिरिराज किशोर - 'चेहरे चेहरे किसके चेहरे',पृ.197

दुरादेश की बातें करते हैं। मुखौटे ही व्यंग्यार्थ को संप्रेषित करते हैं। एक, दो, तीन और चार अपने मुखौटे के बारे में बातें करते हैं। चार कहता है - "उन्होंने ही हमें चेहरा-मोहरा दिया हम लोगों को 'हम लोग' बनाया नहीं तो हम क्या थे? महान लोग छोटे-से-छोटे को ही बड़ा बनाया करते हैं।"[56]

चेहरे उसके, मोहरे अपने

उनके सपने, अपने सपनें ।"[57]

ये कोरस गीत नाटक की मूल संवेदना, उसके व्यंग्य को दर्शाता है। दृश्य चार में चार आदमी सेमिनार-रूम की सफाई करते हुए गीत गाते हैं। दृश्य चार तक पहुँचते-पहुँचते मुखौटे ही शेष रह जाते हैं, चेहरे गायब हो जाते हैं। आदमी की पहचान गुम हो जाती है, मुखौटों की ही पहचान शेष रह जाती है। लेकिन आम आदमी के पास मुखौटा नहीं होता यही सच्चाई है। हम लोगों के पास तो निखालिस यही एक शक्ल होती है। इसे ही ओढ़ लो या बिछालो। बातों बातों में वे कुंभकर्ण के पार्ट को याद करते हैं। साथ ही राम, मेघनाद आंगद का उल्लेख करते हैं। राम-रावण के प्रसंग से सीता हरण की घटनाद्वारा भी व्यंग्य करते हैं। मजाक उड़ाते हैं।

लगता है, प्राचीन कथा, रामकथा का आधार लेकर रामराज्य का सपना दिखाकर, रचा नाटक कभी-कभी रामायण की घटनाओं पर भी व्यंग्य करके जनता का मनोरंजन करता है - जैसे सीताहरण की घटना।

दृश्य पाँच में सबके मुँह पर एक-सा मुखौटा है और वे एक बड़ा मुखौटा देव प्रतिमा की तरह हाथ में लिए कोरस गाकर नाच रहे हैं। चार कहता है देश में जल की कमी है, तो तीनों कहते हैं कमी है तो होने दो। सब मिलकर महामंत्र बोलते है - 'बहुजन हिताय: बहुजन सुखाय' बात केले और आम के पेड (केले की जाति चोर है और आम की साहुकार) से होती हुई समस्याओं, जन-विरोधी वृक्षों के सफाए जन-कल्याण पर लम्बी खोखली बातचीत और बहुत लम्बी प्रक्रिया पर

56. गिरिराज किशोर, 'चेहरे-चेहरे किसके चेहरे', पृ.207
57. वही, पृ.207

आ जाती है। देश की महान यो।जनाओं पर प्रश्नचिन्ह लगता जाता है। आम आदमी की निष्क्रियता पर भी व्यंग्य होता है। वे सभी वृक्षों पर फुल, पत्ते और फल आना धर्म है और उन वृक्षों को काटना अपना धर्म मानते हैं। आम-केले की प्रतीकात्मक कथा-वृक्ष की कथा जनविरोधी नीति को दर्शाती है।

छठा दृश्य वृक्ष काटने के कोरस से शुरू होता है। दुसरा, तिसरा और चौथा कन्धों पर कुल्हाडियाँ लिए गाते हैं -

''कट्टम कट्टा सबको काटा

मानुस काटा तरूवर काटा

किसने काटा?[58]

ये कोरस गाते गाते वे सभी पेडों को काटते हैं। जन-विरोधी पेडों को काटते हुए तिसरा एक पेड के दिल का दर्द सुनता है और उसके बातों पर विचार करने लगता है, बाकि के दो उसे उस पेड को काटने को कहते हैं। चौथा अकबर बादशाह और बीरबल का एक उदाहरण देता है। तिसरे को पेड काटने को कहता है। इसपर तिसरे को धर्म संकट में पडने जैसा लगता है। वे सब मिलकर उस पेड को काटते हैं। उसे जनविरोधी पेड मानते हैं। तिसरा एकटक उस कटे पेड़ की तरफ देखता रहता है। पेड़ काटना विनाश का प्रतीक है, ताकदवार दुर्बलों को हानी पहुँचाते हैं, यह आज की सच्चाई है।

अंत :-

नाटक का अंत भी कोरस से होता है। सातवे दृश्य में दो, तीन, चार मुखौटे लगाए और महान चेहरे का मुखौटा हाथ में उठाए आते है वे महान चेहरे की स्तुति गुनगुनाते जाते हैं। उनके बीच हमेशा स्वार्थ लिप्सा की बाते चलती रहती है। लकडहारे उनसे सवाल करते हैं की काटे हुए पेड़ के खाली जगह कौन-से पेड़ लगाए? खाली जगह पेड़ लगाने का सवाल उनके सामने खड़ा होता है महान चेहरे

58. गिरिराज किशोर - 'चेहरे चेहरे किसके चेहरे', पृ.227

के बारे में बात करते-करते तीन एक सच्ची बात कहता है कि अकेले आदमी का बोलना तब तक हथियार नहीं बन पाता जबतक उसके समर्थन में और बहुत-से हाथ न उठ खड़े हो। वे महान चेहरे का बार बार स्मरण उसकी स्तुति, आम आदमी का भय और क्रमशा महान चेहरे की विकृति उभरती जाती है। दो का कथन है - ''महान चेहरा सदा दूसरों का निर्माण करता है वह हमें प्रेरणा देता है। वही हमें प्रकाश देता है। उसके बिना हम अन्धे है।''[59] महान चेहरे की स्तुति करते हुए वे गाते हैं-

हर कोई तेरा बन्दा है
परहित ही सबका धन्धा है,[60]

इस गीत से नाटक समाप्त होता है। स्वार्थी राजनीति, कुर्सी के लिए लढाई और आम आदमी का शोषण नेताओं की धोखेबाजी, झूठे वायदे तथा असली चेहरे छिपाकर नकली (मुखौटे) चेहरे में अपने बुरे काम करने की प्रवृति को उजागर किया है। आम-आदमी के शोषण को बताया गया है।

निष्कर्ष -

निष्कर्षता हम कह सकते हैं कि, इस पूरे नाटक में संकेत, प्रतीक, बिम्बों से काम लिया गया है। जो कल्पना की माँग करते हैं। कहीं-कहीं कोरस मात्र ध्वनि बनकर रह जाता है, और वह ध्वनी ही अर्थ का काम करती है। यह नाटक कहीं-कहीं अपने असंबद्ध संवादों से और कथा में पात्रों के प्रचलित रूप से रहित लगता है। नाटक के प्रतीक संकेत और असम्बद्धता अधिक है। कोरस भी कुछ ज्यादा ही है। गिरिराज किशोर में सम-सामायिक स्थितियों की पकड अच्छी है और सांकेतिक व्यंग्य की विशेषता भी है। इन सब दोषों के होते हुए भी नाटककार युगीन राजनीतिक लोगों का पर्दाफाश करना चाहता है। राजनीतिज्ञों की स्वार्थ की धरातलता को अच्छी तरह दिखाया है।

---

59. गिरिराज किशोर - 'चेहरे चेहरे किसके चेहरे', पृ.78-79

60. वही, पृ.79-80

यह नाटक आज की राजनीतिक मूल्यहीनता पर आधारित है। इसमें राजनीतिक सत्ता को लेकर संघर्ष है। यह नाटक राजतंत्र से संबंधित होने के कारण किसी-न-किसी राजकीय उथल-पुथल, अशांति एवं विद्रोह का उद्घाटन करता है। इस नाटक में एक, दो, तीन और चार इन सभी के बीच में सत्ता की कुर्सी को लेकर संघर्ष है। इस प्रकार इस नाटक को कथावस्तु की दृष्टी से असफल नहीं कहा जा सकता है।

कथावस्तु को प्रभावी बनाने के लिए कोरस गीत का प्रयोग तथा ध्वनियोजना महत्त्वपूर्ण है तथा पात्रों का नामकरण भी अव्यक्त तथा प्रतीकात्मक है। लगता है नाटककारने नए-नए तंत्रों को अपनाया है। कथानक में गीतों की रचनावली सजीवता लायी है। स्पष्ट है कि गिरिराज ने प्रस्तुत नाट्यरचना में नई शैली अपनाकर कथावस्तु को प्रभावी एवं रंजक बनाया है।

'चेहरे-चेहरे किसके चेहरे' यह आज भी यह दर्शाता है कि आज के समाज में अनेक चेहरों का झूठे मुखौटे पहनकर काम चलाने की प्रवृति पनप रही है। चेरहे बाह्य रूप है मगर भीतरी भाव अलग रहते हैं। यहाँ पात्रों को नाम न देकर प्रतीकात्मक कलात्मकता से एक, दो तथा तीन आदि कहा है। 'बहुजन हिताय बहुजन सुखाय, यह भी आज राजनीति और समाजनीति का मुखौटा है। चेहरा बना है। नेता लोग इसे अपनाकर अपना स्वार्थ पूरा करते हैं। असली चेहरा-नकली चेहरा समझना आम आदमी के लिए असंभव है - यही संदेश दिया है। इस दृष्टी से कथानक सफल लगता है।

2.5.4 केवल मेरा नाम लो -

मनोवैज्ञानिक विषय संबंधित नाटकों में गिरिराज किशोर जी का दूसरा नाटक 'केवल मेरा नाम लो' है। इसका प्रकाशन 1986 में साहित्य सदन कानपुर से हुआ। अनेक साहित्यकारों ने मानवी अर्न्तवृतियों की अभिव्यक्ति अपने साहित्य में की है। साहित्य के भिन्न-भिन्न विषयों में मनोविज्ञान का प्रयोग हुआ है। किसी भी साहित्य रचना में देश-काल की परिस्थिति, सभ्यता, आचार-विचार तथा साहित्यिक मान्यता की अभिव्यक्ति होती है। ''साहित्य रचनाओं में मानव-

हृदय की रागात्मक अनुभूति का त्रित्रण किया जाता है। उसमें मानवीय जीवन का सुख दुःखात्मक रूप, कुण्ठित मनोवासना, अहुम प्रवृति प्रकट होती है।"[61] तात्पर्य यह कि साहित्य मानव जीवन एवं उसके भावों एवं विचारों का लेखा जोखा है।

प्रस्तुत नाटक में भी एक ऐसे नौकरशाह, कुंठित मनोविकारवाले, व्यक्ति का चित्रण किया गया है जो बाह्य जीवन में एक कर्मठ, ईमानदार और सामाजिक सरोकार वाला व्यक्ति हैं पर भावनात्मक स्तर पर परावलंबी है उसे किसी न किसी के आँचल का सहारा चाहिए ही। पहले माँ का फिर पत्नी का और पत्नी के न रहने पर बेटीपर अपना अधिकार मानने लगता है। रंजनी के मानसिक असंतुलन से सुलभा परेशान है। रजनीकांत उसका पिता होकर भी उसे अपना नाम लो पापा पुकारना छोड दो, केवल रजनी कहो ऐसा कहता है। रजनी के इस बात को सुलभा नहीं मानती। सुलभा रजनीकांत को पापा ही पुकारना पसन्द करती है वह नाम नहीं लेती। रजनीकांत की बिगड़ी मानसिकता इस नाटक में दिखाई है जो सुलभा की परेशानी है यही मुख्य कथा है। इस नाटक में समाज के ढलती नैतिकता का चित्रण है।

"जब व्यक्ति की यौनेच्छा की पूर्ति में कोई अवरोध या बाधा आती है, तो उसके व्यवहार में असामान्यता आ जाती है और वह यौनेच्छा की पूर्ति के लिए असामान्य व्यवहार अपना लेता है।"[62] आजकल रिश्तों-नातों का महत्त्व कम होता जा रहा है। मानवीय विकृति बढ़ती जा रही है। इसका वर्णन गिरिराज किशोर जी के प्रस्तुत नाटक में किया गया है।

आरंभ -

'केवल मेरा नाम लो' इस नाटक का आरंभ 'मकान संख्या दो शून्य-शून्य यानी दो सौ मकान पर एक तरफ "स्मृति रजनीकान्त" मिटा मिटा और धुँधला-सालिखा है। अपने नाम के साथ रजनीकांत अपनी माँ का नाम लगाए थे।

---

61. डॉ.शिवराम माली - 'स्वच्छदतावादी नाटक और मनोविज्ञान, पृ.34
62. डॉ.सरयू प्रसाद चौबे - असामान्य मनोविज्ञान और आधुनिक जीवन, पृ.359

बाद में उनकी जगह रागिनी रजनीकांत ने ले ली वह बहुत सुंदर थी। लेकिन कहते हैं ''सौंदर्य बहुत लम्बी उम्र लेकर नहीं आता, उसी तरह वे जल्दी चल बसी फिर बेटी.... लेखक के घर के सामने रजनीकांत खडे होते हैं। लेखक की पत्नी रजनीकांत को पागल कहती है। लेखक को रजनीकांत की हालत देख तरस आता है। लेखक रजनीकांत के पास जाकर उनसे बाते करने लगते हैं। पर रजनीकांत बातें नहीं करते बहुत बाते पूछने पर रजनीकांत कुछ कहता है जिसे लेखक ध्यान से सुनने पर समझते है की रजनी सुलभा को पुछ रहे हैं।

लेखक रजनीकांत को बताते हैं कि अब सुलभा नहीं रही पहले आप यहाँ रहते थे जिस कमरे में सुलभा रहती थी वहाँ अब स्टडी रूम है। रजनीकांत का इस तरह आकर घर को देखते रहना लेखक और उनके घरवालों को अच्छा नहीं लगता वे परेशान होते हैं। उनसे बच्चे डरते हैं। जब रजनीकांत लेखक के घर में प्रवेश करने की कोशिश करता है तब से रजनीकांत को बहुत समझाते हैं पर रजनीकांत में कोई फर्क नहीं पडता। रजनीकांत ने अपनी सिफारिश से वह मकान लेखक को दिलाया था। लेखक रजनीकांत के इस एहसानों तले दबे हैं। इसलिए लेखक रजनीकांत को न चाहते हुए घर में जाने से रोकता है। रजनीकांत के बार-बार आने से लेखक की जिंदगी दुभर हो गई है। घरवाले उन्हें कहने लगें अगर रजनी बाबू के अहसानों से आप इतने दबे हैं तो दबे रहिए हमें कहीं पर एक कोठरी ले दीजिए उसी में दिन काट लेंगे। कितना भी समझाये रजनीकांत फिर आकर लेखक के घर को टकटकी लगाये देखते रहते हैं।

विकास -

नाटक का विकास रजनीकांत के घर से शुरू होता है। जहाँ रजनीकांत की बेटी सुलभा अपने घर की सफाई कर रही है। साथ ही अपनी माँ रागिनी की टंगी तस्वीर से अपने पिता रजनीकांत के बारे में बाते करती है। अपने मन की व्यथा और पिता की बदली मानसिकता को वह अपनी माँ की तस्वीर के सामने बताती है। इतने में रजनीकांत आते हैं और सुलभा को बुलाते हैं। सुलभा को कमरा ठिक करने के कारण से डाँटते हुए फटकारते हैं - ''जब से इस घर में आई

हो, इन बेजान चीजों को सँवारने में लगी रहती हो। काश मैं भी इन्हीं में से कोई एक चीज हुआ होता।''[63]

रजनीकांत को लगता है कि सुलभा उनके पास बैठे, बाते करे, उनके गले मे झूले, केवल उन्हें अपना मित्र, साथी, शुभचिन्तक और एक दोस्त माने। वे सुलभा को अपने साथ आऊटिंग (घूमने) सैर करने के लिए चलने को कहते हैं। सुलभा मना कर देती है। वे उसपर गुस्सा करते हैं। वे सुलभा के साथ जाना चाहते लेकिन वह मना करती है इसलिए उसे नासमझ लडकी कहते हैं। बाद में सुलभा मान जाती है परंतु रंजनीकांत चलने के लिए मना कर देता है और सुलभा के कमरे में टंगी रागिनी की तस्वीर देखकर उसे डाँटते है। मरे लोगों कि तस्वीरे लगाना उन्हें अच्छा नहीं लगता इस बारे में सुलभा को भलाबुरा कहते हैं। पानी लाने पर भी बिना पानी पीये वहाँ से रजनीकांत का चले जाना सुलभा को अच्छा नहीं लगता और वह रो पड़ती है।

ऑफिस का कोई भी आदमी घर आए यह रजनीकांत को पसंद नहीं। जब मिस्टर मिसेज चामड़िया को लेकर पी.ए. आता है तब उन्हें अच्छा नहीं लगता। मिसेज चामडिया रागिनी के मौत की खबर सुनकर सुलभा को समझाती है। उसे गले लगाकर माँ का प्यार देने की बात कहती है तो रजनीकांत उनके उन बातों के लिए शुक्रिया कहता है। मिसेज चामडिया रजनीकांत द्वारा सरकारी बँगला छोड़कर छोटे से घर में आने का कारण रागिनी को मानकर उनकी तारीफ करने लगती है। रजनीकांत नाराज होकर काम की बात करने के लिए कहता है। मिसेज चामडिया रजनीकांत को कंचनबागवाला बँगला देने की बात करके सुलभा से मिलने चली जाती है। रजनीकांत का चेहरा तमतमा जाता है। मिसेज चामडिया दुःखी चेहरा बनाकर रागिनी कि मृत्यु की बात कहकर सुलभा की तारीफ करने लगती है। मिसेज चामड़िया उसे कहती है -''अगर कभी तुम्हें अपनी मम्मी का अभिनय करना पड़े तो तुम्हारे पापा भी तुम्हें न पहचान पाएँ.... ।''[64]

63.गिरिराज किशोर - 'केवल मेरा नाम लो',पृ.22

64. वही, पृ.258

डॉक्टर रजनीकांत की तबीयत के बारे में पूछते हैं और सुलभा को पुकारते हैं तब रजनीकांत 'अस्वस्थ' होता है। सुलभा से किसीका भी मिलना रजनी को बेचैन कर देता है। अच्छा नहीं लगता वह कहता है - "सुलभा सुलभा क्या जाने मरीज मैं हुँ की सुलभा?।"[65] सुलभा आती है डॉक्टर उसे बैठने को कहते हैं। तो रजनी के अंहम को ठेच पहुँचती है वह कहता है - "डॉक्टर कौन होता है तुम्हें बैठानेवाला तुम्हे मेरी नींद से क्या लेना-देना... तुम्हे सोने से फुर्सत मिले तो किसी का ध्यान करो। हर वक्त सोना..... सोना.... ।"[66]

सुलभा की कुछ समझ में नहीं आता वह अपनी माँ की तस्वीर के सामने जाकर सोचती है कि "मुझे अपने ही पिता की आँखों में लपटे-सी निकलती महसूस होती है... और लगता है किसी भी वक्त वे बिजली की तरह टूट कर मुझे जला देंगी।"[67]

डॉक्टर रजनीकांत को समझाते हैं परंतु रजनीकांत डॉक्टर से दुर जाना चाहता है। फिर भी डॉक्टर नब्ज देखते हैं। रजनीकांत डॉक्टर का संबंध सुलभा के साथ जोडता है और कहता है की, "बेटी भी एक औरत ही होती है। यहाँ रजनीकांत के कुण्ठित वासनाओं के दर्शन होते हैं।

रजनीकांत सुलभा के कमरे में आता है। सुलभा चौकती है और मम्मी को बुला लेने की बात कहती है तो रजनीकांत उसे कहता है कि, "जो नहीं है उसे बुलाने को मन करता है और जो है उसे बाते नहीं करती।"[68] रजनीकांत सुलभा को बार-बार पापा कहने के लिए मना करते हैं और कमरे में लगी रागिनी की फोटो उतारना चाहता है। पर सुलभा को वही फोटो एक सहारा रहा है। रजनीकांत सुलभा को रागिणी की तरह देखता है। सुलभा से कहते हैं - "सुलभा.... तुम मुझे पापा कहकर पुकारना बंद कर दो। रागिनी की तरह केवल रजनी कहा करो केवल रजनी।"[69] बदलते-टूटते सामाजिक मूल्यों अनैतिकता

---

65. गिरिराज किशोर - 'केवल मेरा नाम लो',पृ.263
66. वही,पृ.263
67. वही, पृ.54
68. वही, पृ.270
69. वही, पृ.73

पुरूषों की वासनांध नजरों के दर्शन यहाँ होते हैं। एक पिता अपनी पुत्री के साथ पिता नहीं पति बनकर व्यवहार करना चाहता है। यहाँ नाटककार ने बदलती समाज व्यवस्था पर प्रहार करते हुए सोचने के लिए विवश किया हैं। समाज में आज भी ऐसे रजनीकांत दिखाई देते हैं, इसकी ओर संकेत किया है।

रजनीकांत सुलभा को पीएच्.डी. बीच में छोडकर घर ले आता है। रात को रजनीकांत चुपचाप सुलभा के कमरे में जाता है। टार्च की रोशनी से उसे पैर से लेकर सिर तक देखते हैं। सुलभा करवट बदलती है रजनीकांत पीछे हटता है। उसकी नजर एकाएक रागिनी के फोटो पर जाती है। रागिनी का चेहरा उसे मुस्कुराता दिखाई देता है। रजनीकांत दीवार से झटके के साथ फोटो को जमीन पर फेंक देता है। सुलभा चौंककर उठती है। और टूटे काँच के टूकड़ों को उठाती है रजनीकांत उसे रोकता है। उसे अपने मन की बात बताने लगता है। पर सुलभा कुछ नहीं समझ पाती है।

यहाँ विकृत मनोवृत्ति, अतृप्त वासना का प्रतीक रजनी लगता है जो अपनी हवस पूरी करने के लिए सभी रिश्तों को नकारता है।

अंत -

अंत में सुलभा को पुकारता हुआ कमरे में आता है। रजनीकांत दफ्तर नहीं जाना चाहता सिर्फ सुलभा के साथ रहना चाहता है। सुलभा द्वारा पापा कहकर पुकारने पर कहता हैं कि ''फिर कहा पापा.....! भूल जाओं इस मनहुस सम्बोधन को भूल जाओं। रागिनी की तरह मुझे रजनी कहकर पुकारों..... पुकारोऽ.... ।''[70] तब विरोध करती हुई सुलभा कहती है - ''ऐसा नहीं हो सकता। आप माँ और नौकरी के चले जाने के कारण अपना मानसिक संतुलन खो बैठे हैं। आप मेरे पिता है..... । पिता के अलावा कुछ नहीं.... ।''[71]

जब सुलभा अंदर जाना चाहती है तब रजनीकांत रोकता है। वह उससे पत्नीसुख चाहता है पर सुलभा इस बात का विरोध करती है। रजनी उसे

70. गिरिराज किशोर - 'केवल मेरा नाम लो', पृ.89
71. वही, पृ.89

केवल मेरा नाम लो कहता है सुलभा नहीं मानती उसे रजनी कोडो से मारना शुरू करता है।

रजनीकांत उसे जोर-जोर से पिटता ही जाता है। अंत में सुलभा की मौत होती है और रजनीकांत पागल होकर भटकता रहता है। रजनीकांत अपना संतुलन खो बैठता है। सुलभा की मौत से नाटक का अंत हो जाता है। लगता है एक ट्रेजेडी के रूप में यह नाटक रहा है सुलभा की हत्या वासनांधता का परिणाम लगता है।

निष्कर्ष -

रजनीकांत की कुंठाग्रस्त वासनांध मनोवृति का चित्रण करने में नाटककार सफल रहे हैं। इस नाटक में मानवीय संबंधों की अर्थहीनता, तनाव, अधुरापन और क्रुरता को स्पष्ट किया गया है। नाटककार ने मानसिक विकृति का चित्रण भी सफलता से किया है। मनोरूग्ण रजनीकांत अपनी बेटी की जिंदगी बरबाद करना चाहता है। उसकी पीएच्.डी. भी पूरी नहीं होने देता उसे घर वापस लाता है। रागिनी की मौत से उसके जीवन में एक अधूरापण, खालीपन महसूस करता है। वह उसी अधूरेपन को पूरा करने के लिए अपनी बेटी का सहारा लेना चाहता है। मिस्टर और मिसेज चामडिया द्वारा दि गयी रिश्वत ठूकराता है इससे रजनी एक स्वाभिमानी और वफादार नौकर लगता है। परंतु अंदर-ही-अंदर उसका अहम सताता है।

यहाँ स्पष्ट है 'केवल मेरा नाम लो' यह नाटक नाम लेने पर ही चला है। नाम लेने से आत्मशांति पाने की एक मनोवृति पनप रही है रजनीकांत इसका प्रमाण है। मानवी जीवन में जब अधूरापन रहता है तब उसकी क्षतिपूर्ति का प्रयास किया जाता है - रजनीकांत के जिंदगी में पत्नी का स्थान खाली रहता है तब वह उसे भरना चाहता है..... बेटी उन्हें पापा न कहकर नाम से पुकारे यही उनकी अतृप्त-इच्छा अंतिम समय तक सताती है। हर हालत में वह यही चाहती है इसके लिए उसकी पीटाई करता है, पढ़ाई बंद करके घर लाता है। अंत में उसकी हत्या करके अपने अंहम में पागल बनता है।

'केवल मेरा नाम लो' यह नाटक नाम से संबंधित होने के साथ-साथ मानव मन की विकृति दर्शाता है। घटना में अधिकता नहीं परंतु अतृप्त भावों की गहराई है जो अतृप्ति को प्रमाणित करता है। रजनी की स्वभावगत प्रवृत्ति आज की बदलती समाज-व्यवस्था तथा सामाजिक मूल्यों को दर्शाती है। अतः कथावस्तु आज भी कितनी यथार्थ वास्तविक है यह विवाद का विषय है परंतु आज ऐसे रजनीकांत यंत्रतंत्र रहे हैं ऐसा लगता है।

2.5.5 जुर्म आयद -

गिरिराज किशोर का सन् 1987, में नेशनल पब्लिशिंग हाऊस द्वारा प्रकाशित 'जुर्म आयद' सामाजिक नाटक है। इसमें अनपढ़ नारी की समस्या को चित्रित करके वर्तमान विधि-व्यवस्था पर भी प्रकाश डाला है। इसमें अनपढ़ नारी उम्मेदी को उसका पति त्यागता है। पति से परितृकत्या नारी समाज में पुलिस व्यवस्था और विधि-व्यवस्था किस प्रकार पीडित होती है यही मुख्य कथा है। यह एक स्त्री की मानसिक और शारीरिक रूप से शोषित एवं पुरूष के अंहम की कहानी है। महिला समाज के दुख पीड़ा को शब्दबद्ध करनेवाला यह नाटक हमें यह सोचने के लिए मजबूर करता है कि हमारे समाज की सहानुभूति किसके तरफ है? आज की कानून-व्यवस्था कितनी सशक्त है। कौन रखवाला है।

नाटककार गिरिराज ने इस नाटक में विवाह संबंधी समस्या, पारिवारिक जीवन की असफलता तथा नारी समस्या के साथ ही सामाजिक विकृतियों के संबंध में विचार व्यक्त करने के साथ उसपर करारा व्यंग्य भी किया है। इस नाटक के द्वारा मध्यवर्गीय और पीडित समाज की यथार्थ परिस्थितियों का विश्लेषण किया गया है।

आरंभ -

इस नाटक का आरंभ पुलिस थाने से होता है। ''स्थान : थाना शहीद सुखदेव नगर। थाने के बाहर झुग्गी-झोपडी में रहनेवाले कुछ लोग जमा है। उनमें औरत, मर्द, बुढ़े और बच्चे सभी शामिल है। शोर मच रहा है। दीवारों पर टेढे-मेढे शब्दों में कुछ प्रचार या सीख-वाक्य लिखे हैं। उनमें से अपेक्षाकृत कुछ

ज्यादा पढा-लिखा सफेदपोश आदमी उन्हें पढ़-पढ़कर समझ रहा है। कभी-कभी हंसता है। बीच-बीच में जोर से पढ़ने लगता है।''[72]

आदमी नं. एक पढने लगता है पुलिस आपकी निस्वार्थ सेवा करती है। निःस्वार्थ सेवा.....। मुंह बिचका के कंधे चढाकर गिरा देता है। 'पुलिस सुरक्षा का पर्याय है'' यह पढते ही वह मुस्कुराता है और अपने आपसे कहता है लिखा है तो होगी। पुलिस थाने में किसी के पीटने की आवाज आती है। साथ ही भीड में से किसी की आवाज आती है 'उम्मेदी कहाँ है? आदमी नं.एक आगे पढ़ता है 'आपकी जिंदगी आपकी नहीं' वह चौकता है और आश्चर्य से अपने आपको देखता है, फिर पुरा वाक्य पढ़ता है 'आपकी जिंदगी आपकी नहीं समाज की है।' आप उसे सिर्फ रखते हैं। उसके मन में खयाल आता है जिंदगी न हुई, खेत हो गया आगे पढ़ता है 'चोर किसी का कुछ नहीं लेता अपनी आत्मा की हत्या करता है'.... यानी आत्महत्या वह कहता है किसी साले चोर की आत्महत्या करते नहीं देखा। इतने में पुलिस थाने में लाई उम्मेदी को होश आता है। होश में आते ही वह अपनी बच्ची को पूछती है। खुद बचने का पछतावा करती है। उम्मेदी अपने पति के कारण अपनी बेटी को लेकर आत्महत्या के इरादे से नदी में कुद पडती है। वह बच जाती है लेकिन बेटी मर जाती है। उम्मेदी को पूछताछ के लिए बेहोश हालत में पुलिस थाने लाया गया।

पुलिस थाना और अन्य सरकारी दफ्तरों में ऐसी ही बड़ी-बड़ी लंबी चौडी बातें लिखी जाती है। पुलिस समाज के रक्षक है। अपराधी तत्वो की जाँच करनेवाली व्यवस्था है, शोषितों की रखवाली करनेवाली पुलिस आज शोषक बनी है। जो भी थाने में जाएगा उसे इन्साफ मिलेगा यह नहीं कहा जाता इसीकारण दीवार पर लिखे वाक्य पढ़कर सामान्य व्यक्ति भी हँसता है। यहाँ नाटककारने इसी बात पर व्यंग्य करते हुए सुरक्षा का पर्याय पुलिस, जिंदगी समाज के लिए तथा उम्मेदी की कथा के सहारे प्रकाश डालकर पुलिस की नीति को स्पष्ट किया है।

आज की पुलिस-व्यवस्था सामाजिक तत्त्व न बनकर साहित्य का

72.गिरिराज किशोर, जुर्म आयद, पृ.1

विषय बनी है। बदली नीति, प्रवृत्ति का चित्रण साहित्य में ही रहा है। नाटककार गिरिराज किशोर का यह नाटक इसी बात का प्रमाण है।

विकास -

नाटक का विकास उम्मेदी के बयान से होता है। सिपाही आकर बच्चों को डाटकर भगाता है और उम्मेदी को सवाल करने लगता है। दरोगा उम्मेदी का बयान लेना चाहता हैं, उम्मेदी कराह रही होती है, उसे बच्ची की याद आती है। दरोगा नाराज होकर उसे ड़ंडे से पिटने की धमकी देता है। पास में खडा चीफ उम्मेदी को घृणा से देखता है, और कहता है 'हमारा भी हिस्सा है।' इतने में एस.एच्.ओ. आते हैं, वे उन दोनों को फटकारते हुए कहते हैं - ''मर्दानगी घर में छींके पर टांगकर आया करो बरखुर्दार ! साथ लिये घुमोगे तो लोग पकडकर अख्ता करा देंगे। जब तक चुप है, चुप है, अपनी पर आती है, तो हुकुमत को रूला देते हैं।''[73]

चीफ अपनी सफाई देने लगता है। एस.एच.ओ. उसकी बकवास बंद करने का प्रयास करते हैं, और कहते हैं 'तब खडे-खडे ऐसे देख रहे थे कि औरत के अंदर से लड्डू निकलेगा और तुम थप्प मुँह में धर लोगे।''[74] इससे पता चलता है कि दरोगा और चीफ कितनी निचता से उम्मेदी के साथ व्यवहार कर रहे थे। एस.एच्.ओ. शर्मा को बुलाकर कहते हैं, ''शर्म करो..... पुलिस को दरिंदों और वहशियों का पर्याय न बनाओं।''[75]

एस.एच्.ओ.बुढे दरोगा को बुलाकर उम्मेदी का केस उसके हाथ देते हैं। बूढ़ा दरोगा और चीफ ये भी उम्मेदी के साथ गंधी बाते करते हैं, निचता से पेश आते हैं। उम्मेदी भगवान से प्रार्थना करती है कि तुने मुझे क्यों नहीं उठा लिया भगवान? भगवान से प्रार्थना करके उम्मेदी अपनी स्थिति स्पष्ट करती है, परंतु बेसहारा नारी की विवशता का लाभ उठानेवाली ताकद समाज में रहती है। पुलिस रक्षक न बनकर ऐसी नारी के साथ घिनौनी बाते करती है प्रस्तुत नाटक का दरोगा इसका प्रतीक है।

---

73. गिरिराज किशोर, जुर्म आयद, पृ.8
74. वही, पृ.8
75. वही, पृ.10

जस्टिस शिवचरण और जस्टिस चौधरी के सामने उम्मेदी का मुकदमा प्रारंभ होता है। बचावपक्ष में वकील उम्मेदी को न्याय देने की कोशिश करते हैं। उम्मेदी ने हरचंद को यकीन दिलाने की कोशिश की कि, वह निर्दोष है पर किसी ने उसपर विश्वास नहीं किया। औरत का बदचलन होना उतना जरूरी नहीं है जितना करार दे दिया जाना होता है। उस मौत के द्वारा ठूकरा दिए जाने के बाद से मुलजिमा आठ साल से निरंतर दूसरी मौत को अपने कंधों पर ढो रही है.... कानून की रक्षा करनेवालों ने उम्मेदी की अस्मत लुटी। उम्मेदी की सफाई में वकील बचाव कहते हैं। तो सरकारी वकील उम्मेदी के चरित्र पर किचड़ उछालने की भरसक कोशिश करते हैं। वकील बचाव कानून पर व्यंग्य करते हुए जज को बताते हैं कि कैसे उम्मेदी शादी करके बहुत से सपने लेकर पति के घर आई लेकिन उसका स्वतंत्र व्यवहार ससुरालवालों के नजर में खटकने लगा। बदचलन करार दे दिया गया। बेटी होने पर पति ने बेटी का पिता होने से इन्कार कर दिया इसके पास दो ही रास्ते थे या तो शेरनी बनकर उनका खुन पी जाती या फिर वही करती जो उसने किया। सरकारी वकील को ये झुठी कहानी लगती है। फिर भी बचाव पक्ष के वकील उम्मेदी पर हुए अत्याचारों का वर्णन करते हुए कहते हैं -''श्रीमती उम्मेदी की गोद सिर्फ कुंठा, तिरस्कार, बलात्कार और बच्ची की मौत से भरी है। यह कानून अंधा धृतराष्ट्र है जो अपनी बलशाली बांहों के घेरे में आनेवाली हर जानदार और बेजान चीज को चुर-चुर कर देने में ही सुख पाता है? अगर ऐसा है तो वह न कानून है, न न्याय। मात्र ताकत है। पाशविक ताकत।''[76] ऐसा कहकर व्यंग्य करते हैं। यह कथन अंधकार को दर्शाता है। उम्मेदी एक प्रतीक है। आज समाज में ऐसी हजारों औरते हैं जो पीसी जा रही है।

जस्टिस शिवचरण की बेटी आशा की शादी हो चुकी है। आशा का पति उसको अत्यंत फालतु हीन चीज समझता है। उसे किसी को भी फोन करने से रोकता है और अपने लाइसेंस के लिए उसे अपने सेक्रेटरी साहब की पार्टी में ले जाना चाहता है। आशा के मना करने पर उसे कहता है - ''बीवी की जगह पति के

---

76. वही, पृ.32

चरणों में होती है। जिधर उसके चरण चल पडे, उधर ही पत्नी का शीश झुकना चाहिए।''[77] आशा कहती है ''मैं उनपर थुंकती हुँ। आशा का पति उसे धक्का देकर गिरा देता है। अपमानित आशा जहर खा लेती है, जिससे उसके मुँह से झाग निकलने लगता है। मिसेज चरण जल्दी से डॉक्टर को बुलाकर जस्टिस शिवचरण को फोनपर बात करने को कहती है। उन्हें अफसोस है की उनके ही घर ये सब होना था, वे डॉक्टर को बुलाकर आशा की हालत बताते हैं। डॉक्टर आशा को देखकर उसके मृत्यु होने की खबर देते हैं। जस्टिस शिवचरण तकदीर के नाकामयाबी की बात करते हैं। डॉक्टर आशा के स्वभाव के बारे में बताते है - ''बचपन से वह शांत समझदार और शालीन थी।''[78] जस्टिस शिवचरण इस घटना को जुर्म मानते हैं। डॉक्टर ऐसा क्यों सोच रहे है पुछने पर बताते हैं कि - आदत से मजबूर हुँ वैसे अच्छा हुआ तुम चली गयी, बच जाती तो एक दूसरी तरह की मौत का शिकार होना पडता।

डॉक्टर आशा की मौत का झूठा सर्टिफिकेट देने को तैयार होते हैं। और कहते हैं कि - ''मैं सर्टिफिकेट दुंगा.... देखता हुँ मेरे सर्टीफिकेट को कौन चेलेंज करेगा।''[79] यहाँ डॉक्टर की भ्रष्टता दिखाई देता है। जस्टिस शिवचरण को पिता की हैसियत से सोचने को कहते हैं। जस्टिस शिवचरण पुलिस कमिशनर को फोन कर के बुला लेते है। जस्टिस शिवचरण अपनी बेटी की लाश के पास नहीं जाते इसलिए मिसेज चरण उन्हें पत्थर दिल से कहती है और कानून की बेजान किताब समझती है। पुलिस कमिशनर पंचनामा कराकर बाँडी जजसाहब को देते है। जस्टिश शिवचरण कहते हैं - ''कानूनी कारवाही होनी चाहिए आपको जो तफतीश वगैहरा करनी है तो कर लिजीए।''[80] यहाँ पुलिस व्यवस्था और कानून की काबिली पर प्रकाश डाला है।

पुलिस कमिशनर और डॉक्टर मिसेज चरण को दिलासा देते हैं और

77. गिरिराज किशोर, जुर्म आयद, पृ.36
78. वही, पृ.38
79. वही, पृ.39
80.वही,पृ.42

धीरज रखने को कहते हैं। इतने में फोन की घंटी बजती है ज.शिवचरण फोन काटते है। फिर बजती है फिर काटते हैं, घंटी बजती ही रहती हैं चिड़कर मिसेज चरा बाहर आती है और फोन उठाने को कहती है। ज.शिवचरण फोन उठाते हैं वह आशा के पति का फोन होता है। उसे आशा के चले जाने की बात बताकर फोन रखते हैं। आशा की मौत के कारण जस्टिस शिवचरण मिसेज चरण, डॉक्टर और जस्टिस चौधरी बहुत दुःखी होते हैं। ज.शिवचरण का मानना है "कानून की जद में ले आये जाने के बाद उम्मेदीदेवी ज्यादा असुरक्षित हो गयी। कानून के संरक्षको की देखरेख में आने के बाद उसकी अस्मत को ज्यादा खतरा पैदा हुआ।"[81] जस्टिस शिवचरण की भावनात्मक बाते सुनकर जस्टिस चौधरी को लगता है कि ज.शिवचरण में बेटी आशा के मौत के कारण ही उनके नजरिये में बदलाव आया है। ज.चौधरी अदालतों के मुकदमें के लिए लोगों को भी जिम्मेदार मानते हैं।

अंत -

इस नाटक का अंत न्यायाधीश की बेचैनी से होता है। उम्मेदी अदालत के फैसले से पहले ही खुदखुशी कर लेती है। इस कारण जस्टिस शिवचरण बेचैन हो उठते हैं वे पत्नी से कहते हैं कि "स्थितियाँ शिकंजा है। शिकंजे का स्वभाव कसते जाना है। वह कस रहा है.... वह तुम्हें भी पकड़ लेगा। हम दुसरों को शिंकजे में फसते फसते हैं और मरते देखने के आदी हो गये। दोषी हम है... सिर्फ हम !।"[82] यहाँ नाटक का अंत होता है।

यहाँ स्पष्ट है पुलिस और कचहरी में न्याय के लिए जानेवाली नारी के साथ न पुलिस अच्छा व्यवहार करती है न अदालत। गंधी हरकतें खुली आम से हो रही है तो दूसरी ओर शोषित तथा पीड़ित नारी खुदखुशी करके इस समस्या से मुक्ति चाहती है। जस्टिस हो या पुलिस अधिकारी नारी रक्षक नहीं है, ऐसा लगता है। नारी जीवन की व्यथा यहाँ चित्रित की है। एक सामाजिक समस्या को नाटककारने शब्दबद्ध किया है।

---

81. गिरिराज किशोर, जुर्म आयद, पृ.51
82. वही, पृ.58

निष्कर्ष -

गिरिराज किशोर जी का 'जुर्म आयद' महिला समाज के दुख को रेखांकित करनेवाला नाटक है। गरीब स्त्रियों की हीनावस्था उम्मेदी के रूप में दिखलाने में किशोरजी सफल रहे हैं। समाज के सभी वर्गों को रौंदती सत्ता तथा सत्ता का व्यक्तिगत स्वार्थ के लिए उपयोग को इस नाटक में दिखाया है। उम्मेदी समाज की उन बुराइयों की शिकार है जो भूखे कुत्तों की तरह दिन-रात इंसान को दौडाया करती है। इसी समाज में उसके सपनों को तोड़ा मजबूरन उन्हें आपनी जिंदगी का खात्मा करने के लिए किया, उम्मेदी का अत्याचारी पुलिस दरोगा के साथ तथा आशा का अपने अत्याचारी पति के साथ संघर्ष भी परिस्थितियों का मुकाबला करती है चुपचाप आत्म-समर्पण नहीं करती है। नारी चेतना का यही प्रभाव है।

हमारी कानून व्यवस्थापर करारा व्यंग्य किया गया है। नारी पात्रों की अंतर्वेदना भी स्पष्ट दिखाई देती है। इस नाटक में पति-पत्नी का संघर्ष चित्रित है। उस संघर्ष से ही उम्मेदी आत्महत्या करती है। गिरिराज जी ने इसकी कथा वस्तु को सरल एवं स्पष्ट रूप बड़ी संदुरता से प्रस्तुत किया है। जो वर्तमान यथार्थ है।

निष्कर्ष -

साहित्य निर्मिति में महत्त्वपूर्ण तत्व कथावस्तु है। कथावस्तु का सफल प्रयोग होने से साहित्य निर्मिति सफल होगी। कथावस्तु नाटक का महत्त्वपूर्ण तत्व है। नाटक की कथा लोकजीवन के साथ मंचियता से जुड़ी होती है। लोग नाटक की कथा सिर्फ पढ़ते नहीं मंचित होने पर देखते भी है।

गिरिराज किशोर के नाटक समाज की यथार्थ स्थिति को दर्शाते हैं। मनोवैज्ञानिक नाटक 'नरमेध' में तारा की मानसिक कुंठा को दर्शाया है, जो विवाहित होकर भी पति के साथ खुश नहीं है। पति और प्रेमी के द्वंद्व में फँसी नारी है। इनका दूसरा राजनीतिक नाटक 'प्रजा ही रहने दो' का कथानक महाभारत कालीन है। इसमें पौराणिक संदर्भों से वर्तमान स्थिति को दर्शाने का प्रयास किया गया है। तीसरा सामाजिक नाटक 'घास और घोड़ा' आज की प्रशासन और

न्यायपालिका की मिलीभगत को उजागर करनेवाला नाटक है। साथ ही अनैतिक संबंधो को चित्रित करता है। चौथा राजनीतिक नाटक 'चेहरे-चेहरे किसके चेहरे' में आम आदमी का शोषण और मुखैटादारी को बेनकाब करने वाला नाटक है। इसमें सत्ता प्राप्ती की लालसा, कुर्सी का संघर्ष तथा जनता का शोषण चित्रित हुआ है। पाँचवा मनोवैज्ञानिक नाटक 'केवल मेरा नाम लो' रिश्तों के बदलते समीकरण और अस्वाभाविकता के मनोवैज्ञानिक पक्ष को उजागर करता है। छट्ठा सामाजिक नाटक 'जुर्म आयद' वर्तमान न्यायपालिका व्यवस्था और नारी के स्थिति को दर्शाता है।

गिरिराज किशोर के नाटकों की कथावस्तु सामाजिक यथार्थ को स्पष्ट करती है। उनके राजनीतिक, सामाजिक और मनोवैज्ञानिक नाटक है। नाटकों में सामाजिक अंतर्विरोधों तथा विद्रुपताओं की अपेक्षा उन्होंने राजनैतिकता को अधिक अंकित किया है। वर्तमान-व्यवस्था और व्यवस्था के बीच आदमी की स्थिति को उन्होंने नाटकों में चित्रित किया है। लघुता और आधुनिक जीवन के विविध संदर्भों, परिवर्तनों का यथार्थ चित्रण हुआ है। गिरिराज किशोर ने अपने नाटकों में वर्तमान के मानवीय मूल्यों के नष्ट हो जाने का वर्णन किया है। इसमें सामाजिक मूल्य, पारिवारिक मूल्य, दांम्पत्य जीवन मूल्य राजनीतिक, सत्ता संघर्ष, भ्रष्टाचार आर्थिक विषमता, धार्मिक मूल्य और सांस्कृतिक मूल्य टूट रहे है। इनमें पहले जैसा कोई भाव नहीं रहा। बदलते मूल्यों के साथ आचार-विचार में परिवर्तन आया है ये सभी मूल्य गिरिराज के नाटकों में बदलते मूल्यो के साथ चित्रित हुए है।

मनोवैज्ञानिक नाटकों की रचना में किशोर जी सफल रहे हैं। जिसमें तारा और रजनीकांत के मन का अन्तर्द्वंद्व स्पष्ट किया गया है। मानसिक कुंठा, अहंम और ईर्ष्या आदि गुण इन पात्रों में जादा है। पात्रों की मानसिकता चित्रित करने में सफल रहे हैं। नारी मनोविश्लेषणवादी आधार भूमि पर, अंतभाव ग्रस्तता तथा हीनता की मनोदशा में नारी के मन में उत्पन्न भावनाओं का तथा प्रेम और यौन संबंधों के यथार्थ को प्रस्तुत किया है।

पौराणिकता और आधुनिकता का बहुतही गहरा संबंध है। पुराने मूल्य चेतना के नाम पर परिवर्तित होते नजर आते हैं। इनमें आधुनिकता महत्त्वपूर्ण

है। राजनीति के संदर्भ में गिरिराज ने राजनीतिक भ्रष्टाचार, कुव्यवस्था और सत्ता की लालसा को चित्रित किया है। कुर्सी पाने की या सत्ता पाने की वर्तमान स्थिति को नाटकों द्वारा दर्शाया है। राजनेताओं के झूठे वादे और मतलबी राज्य व्यवस्था को अपने नाटकों में उजागर किया है। सत्ता के लिए सामान्य जनता का शोषण किया जाता है। ये कौरव पांडवों का युद्ध इसी का प्रमाण है।

गिरिराज की नाट्यशैली प्रभावी है। इन्होंने अपने नाटकों में समाज में फैला अवैध्य संबंध, जुल्म, अन्याय, अत्याचार, झूठी व्यवस्था तथा उच्चपदस्थ लोगों की भ्रष्टता आदि को उठाया है। सामाजिक कुप्रवृतियों को स्पष्ट किया है। नारी पात्रों का चित्रण बडा ही मार्मिक बना है। नारी की हीनदीन स्थिति को बताया है। नारी जागृति के प्रति तथा विद्रोह के प्रति भी आवाज उठाई है। अन्याय अत्याचार का विरोध करनेवाली द्रौपदी, उम्मेदी तथा आशा का चित्रण किया है। न्याय व्यवस्था एवं कानून-व्यवस्था पर करारा व्यंग्य किया है।

गिरिराज ने अपने नाटकों में समाज की स्थिति के साथ समाज जागृती तथा सामाजिक परिवर्तन और सुव्यवस्था का संदेश दिया है। इनके ज्यादातर नाटकों का मंचीकरण हो चुका है। नाटककार ने अपने नाटकों में सभी वर्गों का चित्रण किया है। इनके हर एक नाटक की कथावस्तु अलग शैली में प्रस्तुत हुई है। जो पाठक का ध्यान आकर्षित करती है। गिरिराज किशोर ने अपने नाटकों में व्यक्ति के मन की व्यथा और महत्त्वपूर्ण समस्याओं को बताने की कोशिश की है। गिरिराज किशोर एक सफल नाटककार के रूप में हमारे सामने आते हैं। उनके सभी नाटक सफल और अच्छे नाटक की कोटी में आते हैं।

****